



वर्ष-60 अंक-5 जयपुर, शनिवार, 15 अगस्त, 2026 मूल्य- 10 रुपए पृष्ठ- 8

आजादी की मशाल वैचारिक स्वतंत्रता से ही रोशन है!

80वें स्वतंत्रता दिवस पर इस पक्ष का विशेष संपादकीय विनोद जोशी द्वारा

किसी भी संप्रभु राष्ट्र के लिए आजादी केवल औपनिवेशिक शासकों के चले जाने या संविधान में मौलिक अधिकारों के दर्ज हो जाने मात्र का नाम नहीं है।

आजादी सतत प्रक्रिया

आजादी एक स्थिर अवस्था नहीं है; यह एक सतत प्रक्रिया है जिसे हर दिन बचाना और पोषित करना पड़ता है। स्वतंत्रता की मशाल केवल राष्ट्रीय झंडे फहराने या देशभक्ति के नारे लगाने से प्रज्वलित नहीं रह सकती। यह मशाल तभी तक रोशन रहेगी जब तक देश का अंतिम नागरिक भी बिना किसी डर के विचार व्यक्त करने, सवाल पूछने और सत्ता की आंखों में आंखें डालकर सच बोलने के लिए स्वतंत्र है।

भौगोलिक सीमाओं की सुरक्षा और राजनीतिक संप्रभुता किसी देश के शरीर का निर्माण करती हैं, किंतु उसकी आत्मा उसकी 'वैचारिक स्वतंत्रता' (बौद्धिक एवं वैचारिक स्वतंत्रता) में बसती है। यह वैचारिक स्वतंत्रता भी अपने आप में एक वृहद आयाम रखती है, जिसमें बौद्धिक और वैचारिक गुण प्रबलता से प्रकट होते हैं।

इतिहास साक्षी है कि विचारों की मशाल जब तक प्रज्वलित रहती है, तब तक लोकतंत्र जीवित रहता है। जब समाज में प्रश्न पूछने, असहमति व्यक्त करने, विविध दृष्टिकोणों को स्वीकार करने और सत्ता के समक्ष सत्य बोलने की स्वतंत्रता समाप्त होने लगती है, तो आजादी का ढांचा भीतर से खोखला होने लगता है। वैचारिक स्वतंत्रता वह उर्वर भूमि है जहां नवीन चेतना, मौलिक सोच और सामाजिक परिवर्तन के अंकुर फूटते हैं। यदि विचारों को भय, सत्ता के दबाव या पक्षपातपूर्ण आख्यानों से बांध दिया जाए, तो स्वतंत्रता की मशाल धीरे-धीरे बुझने लगती है।

वैचारिक स्वतंत्रता: लोकतंत्र का आधार स्तंभ

सच्ची आजादी की कसौटी यह नहीं है कि सत्ता में बैठे लोग कितना बोलते हैं, बल्कि यह है कि सामान्य नागरिक और असहमत आवाजें कितनी निर्भीकता से अपनी बात रख पाती हैं। महान दार्शनिक वॉल्टेयर का एक प्रसिद्ध कथन है—मैं आपके विचारों से असहमत हो सकता हूँ, लेकिन आपके विचार व्यक्त करने के अधिकार की रक्षा के लिए अपने प्राण तक दे सकता हूँ। यही भावना वैचारिक स्वतंत्रता का मूल आधार है।

लोकतंत्र में बहुलतावाद और संवाद की रीढ़ वैचारिक स्वतंत्रता ही है। जहां चिंतन और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर पहरा बैठा दिया जाता है, वहां लोकतंत्र धीरे-धीरे सत्तावाद या बहुसंख्यकवाद में बदलने लगता है।

परिदृश्य में युवा और जन-आंदोलन

आज की दुनिया में जब पारंपरिक व्यवस्थाएं या राजनीतिक तंत्र नागरिकों की आकांक्षाओं को दबाने की कोशिश करते हैं, तो जन-आंदोलन स्वाभाविक रूप से जन्म लेते हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका 'जेन जी' और युवा पीढ़ी निभा रही है।

जन-आंदोलनों की चेतना

शेष भाग पृष्ठ 2 पर

आजादी के 79 वर्ष भारत की विकास यात्रा, उपलब्धियां एवं वर्तमान चुनौतियां

नवयुग की विशेष रिपोर्ट

15 अगस्त 1947 को जब भारत आजाद हुआ, तब देश औपनिवेशिक शोषण, गरीबी, अकाल और चरम पिछड़ेपन से जूझ रहा था। आज 79 वर्षों के क्रमिक विकास के बाद भारत दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है। कृषि आधारित अर्थतंत्र से निकलकर अंतरिक्ष, सूचना प्रौद्योगिकी और विश्वस्तरीय इंफ्रास्ट्रक्चर के क्षेत्र में भारत ने अपनी एक अलग पहचान बनाई है।

आज भले ही कुछ भी राग अलापा जाता हो, लेकिन यह ध्रुव सत्य है कि 1947 से लेकर 2026 तक जो भी विकास और प्रगति हुई है वह

पहुंच रही है। यह बताता है कि देश में जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं और उपभोग में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। यह कोई 10-15 साल में नहीं हुआ है, बल्कि यह 79 वर्षों की सतत प्रगति और विकास का एक जीता जागता उदाहरण है।

इसी तरह आप देखेंगे स्वतंत्रता के समय केवल 20 विश्वविद्यालय और कुछ सौ कॉलेज थे, आज 1,100 से अधिक विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स सहित विशाल शिक्षा तंत्र देश में है। आज हम तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में विश्व में अपना अलग स्थान बना चुके हैं। आधारभूत ढांचे की बात करें तो इस क्षेत्र में

सेवाओं के सरकारी तंत्र के साथ निजी स्वास्थ्य सेवाओं का विशाल नेटवर्क स्थापित हो चुका है, जिनकी विश्वसनीयता भी है। रेलवे नेटवर्क भी सीमित था, आज लगभग 68,000 किलोमीटर का रेल नेटवर्क है। हमारा रेल नेटवर्क अमेरिका, चीन और रूस के बाद विश्व का चौथा सबसे बड़ा नेटवर्क है। यही नहीं एक प्रशासनिक इकाई के अंतर्गत संचालित होने वाला विश्व का दूसरा सबसे बड़ा नेटवर्क होने के साथ विश्व में एक प्रशासन में कर्मचारियों की संख्या के हिसाब से भी विश्व के गिने चुने संस्थानों में है। देश में खाद्य सुरक्षा अनाज के आयात के भरोसे थी, आज खाद्यान्न उत्पादन में न सिर्फ हम आत्मनिर्भर हैं वरन बहुत से देशों को निर्यात भी करते हैं।

इस सम्पूर्ण यात्रा में देश के हर प्रधानमंत्री का बहुमूल्य योगदान है। भारत के पूर्व प्रधानमंत्रियों ने अपने-अपने तरीके से विशिष्ट और ऐतिहासिक योगदान दिया है। भारत निर्माण का यह यज्ञ भारत के पूर्व प्रधानमंत्रियों की प्रगतिशीलता और परिकल्पनाओं का बेहतरीन आइना है। आइए एक दृष्टि कुछ महत्वपूर्ण कार्यों पर डालें—

पंडित जवाहरलाल नेहरू (1947-1964)—आधुनिक भारत के निर्माता के रूप में आईआईटी, आईआईएम, एम्स, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन की नींव रखी। भारी उद्योगों भेल, सेल और बड़े बांधों (भाखड़ा नांगल) का निर्माण कराया।

लालबहादुर शास्त्री (1964-1966)—जय जवान, जय किसान का नारा दिया और भारत को खाद्य सुरक्षा देने के लिए श्वेत क्रांति (Milk Revolution) और हरित क्रांति के आधार को मजबूत किया।

इंदिरा गांधी (1966-1977, 1980-1984)—14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया, 1974 में पोखरण- परमाणु परीक्षण कराया और कृषि आत्मनिर्भरता के लिए हरित क्रांति को पूर्ण रूप से लागू किया। बांग्लादेश की आजादी की सूत्रधार बनीं, जिसकी परिणति पाकिस्तान के विभाजन के रूप में हुई।

राजीव गांधी (1984-1989)—भारत में कंप्यूटर व टेलीकॉम क्रांति की शुरुआत की। पंचायती राज व्यवस्था को सशक्त बनाया

शेष भाग पृष्ठ 2 पर



एक सतत प्रक्रिया है। देश के हर प्रधानमंत्री का योगदान अपने आप में विशिष्ट है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने कार्यकाल की शुरुआत एक बदहाल देश से की थी, सदियों की गुलामी से मुक्त होते भारत के पास न आधारभूत ढांचा था और न नागरिक सुविधाओं का कुछ अतापता था। समय अत्यंत आधुनिक और प्रगतिशील सोच के साथ

1947 में भारत

आजादी के समय 1947 में साक्षरता दर मात्र 12%-18% के करीब थी, जो अब (2026) में 77% से 80% तक पहुंच चुकी है। महिला साक्षरता दर तो 10% से भी कम थी। यह एक बड़ी उपलब्धि है। व्यक्ति की जीवन प्रत्याशा लगभग 32 वर्ष थी, जो अब लगभग 70 वर्ष

हम दुनिया के अविक्सित देशों की श्रेणी में आते थे। 1947 की बात करें तो ऊर्जा क्षेत्र में बिजली उत्पादन क्षमता सिर्फ 1,700 मेगावाट थी और नाममात्र का राजमार्गों का तंत्र था। आज हमारी बिजली उत्पादन क्षमता 420 गीगावाट से अधिक है और 1.4 लाख किलोमीटर का राष्ट्रीय राजमार्ग नेटवर्क है। यह दुनिया का तीसरा बड़ा सड़क नेटवर्क है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में हम बढ़ावा दे रहे हैं। चेचक, हैजा, मलेरिया और पोलियो जैसी महामारियों का प्रकोप था। शिशु मृत्यु दर अत्यधिक उच्च थी और बुनियादी प्राथमिक चिकित्सा केंद्र (PHC) तक पहुंच भी अनुपलब्ध थी। आज भले ही कमी दिखती हो, लेकिन अब हम अधिकांश महामारियों से देश को मुक्त कर चुके हैं। स्वास्थ्य

प्रथम पृष्ठ का शेष भाग...

दुनियाभर में हाल के वर्षों में हुए आंदोलन इस बात का प्रमाण हैं कि जब वैचारिक स्वतंत्रता और अधिकारों पर हमला होता है, तो जनता सड़कों पर उतर आती है। श्रीलंका और बांग्लादेश के जन-आंदोलनों में आर्थिक बदहाली, भ्रष्टाचार और तानाशाही रवैये के खिलाफ युवाओं ने सत्ता की चूलें हिला दीं। ऐसे ही केन्या और नेपाल में युवाओं ने कर वृद्धि, शासन की जवाबदेही और सामाजिक न्याय के मुद्दों पर अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता दिखाई। इन सबसे आगे बढ़कर जलवायु आंदोलन में दुनिया भर के युवाओं ने वैश्विक नीति-निर्माताओं को विकास के मॉडल पर पुनर्विचार करने के लिए मजबूर किया।

भारत में जेन जी आंदोलन की

प्रासंगिकता

भारत में भी जेन जी और युवाओं ने समय-समय पर यह साबित किया है कि वे केवल दर्शक नहीं हैं। चाहे अग्निवीर योजना के खिलाफ युवाओं का असंतोष हो, मेडिकल कोर्सेस की प्रवेश परिक्षा (नीट) और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं की धांधलियों के खिलाफ छात्रों का शांतिपूर्ण विरोध हो, या लैंगिक हिंसा और महिला सुरक्षा के खिलाफ सड़कों पर उतरी युवा चेतना हो। इन सभी आंदोलनों के पीछे एक मुख्य शक्ति कार्य कर रही थी—अपनी बात कहने और व्यवस्था से सवाल पूछने की वैचारिक स्वतंत्रता। जब संस्थाएं चुप रहती हैं या जवाब देने से बचती हैं, तब युवाओं की यह आवाज आजादी की मशाल को रोशन रखने का काम करती है।

प्रेस फ्रीडम इंडेक्स: चिंताजनक स्थिति

वैचारिक स्वतंत्रता का सबसे बड़ा संवाहक और रक्षक प्रेस या मीडिया होता है। मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा गया है। लेकिन वर्तमान समय में इस स्तंभ की स्थिति अत्यंत दयनीय और चिंताजनक नजर आती है। अंतरराष्ट्रीय संस्था रिपोर्टर्स विदाउट बॉर्डर्स द्वारा जारी होने वाले विश्व प्रेस स्वतंत्रता सूचकांक में भारत की रैंकिंग लगातार गिरती रही है। 180 देशों की सूची में भारत का निचले पायदानों (150वें स्थान के आसपास या उससे नीचे) पर खिसकना इस बात का संकेत है कि देश में पत्रकारिता के लिए परिस्थितियां कठिन होती जा रही हैं।

मुख्य कारण

पत्रकारों की सुरक्षा का संकट—स्वतंत्र रूप से रिपोर्टिंग करने वाले पत्रकारों पर कानूनी मामले दर्ज होना, उन्हें जेल में डालना या उन पर शारीरिक हमले होना अब सामान्य सी बात हो चली है। आर्थिक दबाव

और स्वामित्व से जुड़े हित इसका बड़ा कारण है। मीडिया संस्थानों का बड़े कॉरपोरेट घरानों के हाथों में केंद्रित हो जाना, जिनका सीधा हित सत्ता से जुड़ा होता है अब कोई अनदेखी या अजूबा नहीं है।

सरकारी नियंत्रण और सेंसरशिप ने हालात बदतर किए हैं। डिजिटल मीडिया कानूनों और सूचना प्रौद्योगिकी नियमों के माध्यम से डिजिटल अभिव्यक्ति को सीमित करने का प्रयास सरकारें लगातार कर रही हैं, यही नहीं यह राष्ट्रवाद के नाम पर खुलेआम और बेशर्मी से हो रहा है।

खबरिया चैनल्स और गोदी मीडिया

आज भारत में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया (मुख्यतः खबरिया चैनल्स) के प्रति आम नागरिक का विश्वास अभूतपूर्व रूप से घटा है। जिस मीडिया का काम सत्ता से सवाल पूछना था, वह सत्ता की नीतियों और आख्यानो का ढोल पीटने में व्यस्त दिखाई देता है। जबकि पारंपरिक मीडिया सत्य की खोज और सत्ता से तीखे सवाल पूछने की हैसियत रखता रहा है। जनपक्षधरता और इसके लिए निष्पक्ष बहस और विश्लेषणों का दौर कोई बहुत पहले नहीं, बल्कि अभी कुछ वर्ष पहले तक था। ताजा दौर इस तथाकथित गोदीमीडिया के उभार के साथ ही शुरू हुआ है। चाटुकारिता और अतिराष्ट्रवाद के प्रदर्शन में कोई पीछे नहीं रहना चाहता। सामाजिक-धार्मिक ध्रुवीकरण का खुला फरुखाबादी खेल मीडिया संस्थानों के कॉर्पोरेट्स के हाथ में जाने के बाद चरम पर है। विपक्ष और असहमत आवाजों को सत्ता से ज्यादा इनके ही हाथों से बनाया जा रहा है। हद तो यह है कि इन चैनल्स में बैठे एंकर- एंकरनियां धौंस के साथ बेशर्म प्रदर्शन में बदल चुकी हैं।

गोदी मीडिया शब्द का उद्भव

जनता और स्वतंत्र पत्रकारों द्वारा गढ़ा गया गोदी मीडिया (अंग्रेजी में इसे लैपडॉग मीडिया कहा जाता है) शब्द केवल एक ताना नहीं है, बल्कि यह टीवी पत्रकारिता के पतन की गंभीर समीक्षा है। इसका अर्थ उस मीडिया से है जो सत्ता की गोदी में बैठकर उसके एजेंडे को आगे बढ़ाता है और जनता के वास्तविक प्रश्नों (बेरोजगारी, महंगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, किसान संकट) से आंखें मूंद लेता है। यह किसी भी लोकतंत्र के लिए गंभीर चेतावनी भी है और संकट भी।

आम आदमी में बढ़ता रोष

आज आम नागरिक जब टीवी स्क्रीन खोलता है, तो उसे सूचना या ज्ञान के स्थान पर चीखते-चिल्लाते एंकर, प्रायोजित बहसों और सामाजिक वैमनस्य फैलाने

वाले विषय दिखाई देते हैं। इस रवैये ने आम जनता के मन में गहरा असंतोष और आक्रोश पैदा किया है। यही कारण है कि टीवी चैनल्स की टीआरपी और विश्वसनीयता में भारी गिरावट आई है। लोग अब मुख्यधारा के टीवी न्यूज चैनल्स को देखने से बच रहे हैं और जानकारी के लिए स्वतंत्र डिजिटल प्लेटफॉर्म्स की ओर रुख कर रहे हैं। हकीकत में उन्हें अभी नहीं दिख रहा, लेकिन यह उनके अस्तित्व के लिए बेहद घातक स्थिति है।

मुद्दों का गायब होना

देश की वास्तविक समस्याएं टीवी की प्राइम टाइम बहसों से गायब हो चुकी हैं। टीआरपी की होड़ में सांप्रदायिक और संवेदनशील मुद्दों को उछाला जाता है, जिससे समाज में भाईचारे और सौहार्द को नुकसान पहुंच रहा है। सत्ता की जवाबदेही अब इतिहास की वास्तु हो चुकी है। जब मीडिया सत्ता से सवाल नहीं पूछता, तो शासन व्यवस्था में निरंकुशता और भ्रष्टाचार बढ़ने का खतरा पैदा हो जाता है। सत्य और असत्य में अंतर धुंधला चुका है। दुष्प्रचार को न्यूज बनाकर परोसा जाता है, जिससे आम जनता भ्रमित होती है और उसकी वैचारिक स्वतंत्रता प्रभावित होती है।

डिजिटल और सोशल मीडिया

एआई के युग में डिजिटल और सोशल मीडिया का उभार एक आशा की किरण है या नई चुनौती, यह अभी भविष्य के गर्भ में है। मुख्यधारा के मीडिया के पतन के बाद वैचारिक स्वतंत्रता का केंद्र डिजिटल प्लेटफॉर्म्स और सोशल मीडिया पर स्थानांतरित हो गया है। यूट्यूब, स्वतंत्र ब्लॉग और पॉडकास्ट अब नए चेहरे के रूप में तेजी से खबरिया चैनलों का स्थान ले रहे हैं। लेकिन बिना किसी नियम कायदे के यह क्षेत्र कभी भी बेलगाम हो सकता है, जिसकी कीमत अंततः देश की जनता को ही चुकानी है।

हालांकि इनका सकारात्मक पक्ष कहीं ज्यादा बहुआयामी और वैचारिक स्वतंत्रता का पोषक है। आज स्वतंत्र पत्रकार बिना किसी कॉरपोरेट या सरकारी दबाव के सीधे जनता तक सत्य पहुंचा रहे हैं। जेन जी और युवा वर्ग इन माध्यमों के जरिए अपनी आवाज बुलंद कर रहा है।

इन सबकी चुनौतियां भी इतनी ही व्यापक हैं। डिजिटल दुनिया में फेक न्यूज, एल्गोरिदम आधारित ईको-चेंबर और हेत स्पीच का प्रसार भी एक बड़ी चुनौती बनकर उभरा है। इसके अतिरिक्त, सरकारें डिजिटल मीडिया पर भी कड़े नियम लागू करके इस अंतिम स्वतंत्र स्थान को सीमित करने का प्रयास कर

रही हैं।

मशाल रोशन रहे!

यदि हमें अपने लोकतंत्र को जीवंत रखना है और स्वतंत्रता के वास्तविक मूल्य को सहेजना है, तो कुछ कदम भी उठाने होंगे। मीडिया की स्थिति में सुधार और निष्पक्षता कायम रखना बहुत बड़ी चुनौती है। इसके लिए मीडिया संस्थानों में वित्तीय पारदर्शिता को सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है, ताकि कॉरपोरेट और राजनीतिक नियंत्रण को समाप्त हो सके।

आज चाहे कोई आंदोलन हो या कोई घटना-दुर्घटना, पत्रकारों की सुरक्षा बड़ी समस्या है। जमीन पर जाने वाले अधिकांश पत्रकारों की सुरक्षा का मुद्दा एक बड़ा विशेष बन चुका है। निष्पक्ष और निर्भीक पत्रकारिता करने वालों के लिए कड़े सुरक्षात्मक कानून बनाए जाएं।

नागरिक चेतना और मीडिया साक्षरता का पहलू भी चिंताजनक है। आम नागरिकों को यह समझना होगा कि वे क्या देख रहे हैं और क्या पढ़ रहे हैं।? उन्हें सूचना और प्रचार यानी प्रोपगंडा के बीच अंतर करने की क्षमता विकसित करनी होगी।

असहमति का सम्मान

समाज और सरकार दोनों स्तरों पर विरोधी विचारों और असहमति को देशद्रोह या अपराध मानने के बजाय, उसे सुधार के अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए। जेन जी और आने वाली पीढ़ियों को राजनीतिक और सामाजिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। आजादी सतत प्रक्रिया

आजादी एक स्थिर अवस्था नहीं है; यह एक सतत प्रक्रिया है जिसे हर दिन बचाना और पोषित करना पड़ता है। स्वतंत्रता की मशाल केवल राष्ट्रीय झंडे फहराने या देशभक्ति के नारे लगाने से प्रज्वलित नहीं रह सकती। यह मशाल तभी तक रोशन रहेगी जब तक देश का अंतिम नागरिक भी बिना किसी डर के विचार व्यक्त करने, सवाल पूछने और सत्ता की आंखों में आंखें डालकर सच बोलने के लिए स्वतंत्र है।

गोदी मीडिया का उभार और प्रेस फ्रीडम इंडेक्स में गिरावट इस बात की चेतावनी है कि हमारी वैचारिक स्वतंत्रता खतरे में है। लेकिन दुनिया भर में और भारत में युवाओं और नागरिकों द्वारा उठाए जा रहे आवाज के कदम यह भरोसा दिलाते हैं कि चेतना अभी मरी नहीं है। जब तक समाज में प्रश्न पूछने की हिम्मत जिंदा है, तब तक वैचारिक स्वतंत्रता और आजादी की मशाल अनवरत प्रज्वलित रहेगी।

प्रथम पृष्ठ का शेष भाग

और नवोदय विद्यालयों की स्थापना की।

पी. वी. नरसिम्हा राव (1991-1996)– डॉ. मनमोहन सिंह के साथ मिलकर 1991 के आर्थिक उदारीकरण को लागू किया। लाइसेंस राज खत्म कर भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक बाजार के लिए खोल दिया।

अटल बिहारी वाजपेयी (1998-2004)– स्वर्णिम चतुर्भुज योजना और प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना से बुनियादी ढांचे में क्रांति लाएं। सर्व शिक्षा अभियान की शुरुआत की और 1998 में पोखरण-II परमाणु परीक्षण कर भारत को परमाणु शक्ति बनाया।

डॉ मनमोहन सिंह (2004-2014)– मनरेगा , शिक्षा का अधिकार कानून, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन और भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौता किया। देश की जीडीपी वृद्धि दर ऐतिहासिक स्तर पर पहुंची।

नरेन्द्र मोदी (2014-वर्तमान)– डिजिटल इंडिया, स्वच्छ भारत अभियान, आयुष्मान भारत (विश्व की सबसे बड़ी स्वास्थ्य बीमा योजना), राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और यूपीआई आधारित डिजिटल क्रांति।

साथ ही वंदे भारत एक्सप्रेस, नए एक्सप्रेसवे और पीएम गतिशक्ति जैसे इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स को गति दी।

इस तरह देखेंगे कि हर प्रधानमंत्री का अपना विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान भारत की प्रगति के इतिहास में है। राजनीतिक चरम से देखने पर सबमें कुछ कमियों को ईंगित करना दूषित मानसिकता होगी, यदि हम इन्हें समग्र और निष्पक्ष दृष्टि से नहीं देखेंगे तो यह हमारा देश के इतिहास को नकारने का प्रयास मात्र होगा।

चुनौतियां अभी भी हैं!

स्वतंत्रता के पश्चात हुईअभूतपूर्व प्रगति के बावजूद आज तीन प्रमुख क्षेत्रों में गंभीर ढांचगत चुनौतियां बनी हुई हैं–

1. आधारभूत ढांचा (इंफ्रास्ट्रक्चर):

शहरी-ग्रामीण विषमता एक बड़ी चिंता का विषय है। मेट्रो शहरों का विकास तेजी से हुआ है, परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी बारहमासी सड़कों, लॉजिस्टिक्स कनेक्टिविटी और आधुनिक जल निकासी प्रणालियों का अभाव है।

लॉजिस्टिक्स **लागत**–भारत में लॉजिस्टिक्स

लागत जीडीपी का लगभग 13-14% है, जबकि विकसित देशों में यह 8-9% है।

जलवायु परिवर्तन– बढ़ते प्रदूषण और अनियोजित शहरीकरण के कारण इंफ्रास्ट्रक्चर पर दबाव बढ़ रहा है।

2. स्वास्थ्य

किसी भी देश की स्वास्थ्य व्यवस्था को खड़ा करने बजट आवंटन एक महत्वपूर्ण घातक है, लेकिन हमारे देश बड़ी समस्या बजट का कम आवंटन है। भारत सरकार जीडीपी का केवल 2.1% के आसपास स्वास्थ्य पर खर्च करती है, जो वैश्विक औसत से काफी कम है।

आउट ऑफ पॉकेट एक्सपेंस– आज भी आम नागरिक का एक बड़ा हिस्सा बीमारियों के इलाज में अपनी जेब से खर्च होता है, जिससे कई परिवार गरीबी रेखा के नीचे चले जाते हैं।

डॉक्टर-मरीजों का अनुपात– ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में विशेषज्ञ डॉक्टरों, नर्सों और आधुनिक चिकित्सा उपकरणों की भारी कमी है।

3. शिक्षा:

गुणवत्ता और कौशल विकास स्कूलों की संख्या

जरूर बढ़ी है, लेकिन बुनियादी पठन-पाठन की क्षमता और स्किल-गैप गंभीर मुद्दा है।

रोजगारपरकता की कमी– हर साल लाखों छात्र स्नातक होते हैं, लेकिन उद्योग की मांग के अनुसार व्यावहारिक कौशल न होने के कारण बेरोजगारी का सामना करते हैं।

डिजिटल डिवाइड– ग्रामीण और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए डिजिटल शिक्षा और आधुनिक तकनीक तक पहुंच सीमित है।

फिर भी असाधारण

1947 के अभावों भरे दौर से निकलकर 2026 तक भारत ने जो सफर तय किया है, वह असाधारण है। आज भारत न केवल एक क्षेत्रीय शक्ति है, बल्कि वैश्विक मंच पर एक निर्णायक अर्थव्यवस्था है। यदि भारत अपनी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करे, स्वास्थ्य सेवा पर सार्वजनिक व्यय बढ़ाए और समावेशी इंफ्रास्ट्रक्चर का निर्माण करे, तो विकसित भारत का सपना निश्चित ही साकार हो सकता है।



पंचायत-निकाय चुनाव: 16 अगस्त से लग सकती है आचार संहिता

महापौर-अध्यक्ष पदों के आरक्षण का लॉटरी से निर्धारण

राजस्थान संवाददाता की रिपोर्ट

जयपुर: राजस्थान में आगामी नगर निकाय और पंचायती राज संस्थाओं के आम चुनाव-2026 को लेकर राज्य निर्वाचन आयोग ने तैयारियां तेज कर दी है। राज्य निर्वाचन आयुक्त राजेश्वर सिंह ने सोमवार को शासन सचिवालय में संबंधित विभागों के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ समीक्षा बैठक कर चुनावी व्यवस्थाओं का जायजा लिया। बैठक में कानून-व्यवस्था, निर्वाचन कार्मिक, मतदान केंद्र, आरक्षण, अधिकारियों के स्थानांतरण और चरणबद्ध चुनाव व्यवस्था सहित कई महत्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा हुई।

आयोग ने लॉटरी प्रक्रिया को जल्द पूरा करने के निर्देश इसके साथ तबदला प्रक्रिया को लेकर स्पष्ट किया कि 15 अगस्त से पहले पूरी कर लें। आयोग की ओर से 15 अगस्त की डेडलाइन के बाद ये माना जा सकता है कि 16 अगस्त को आयोग निकाय चुनाव की घोषणा कर सकता है।

18 हजार निकाय और 48 हजार पंचायत मतदान केंद्रों की तैयारी- राज्य निर्वाचन आयुक्त राजेश्वर सिंह ने कहा कि एक राज्य-एक चुनाव के तहत पंचायती राज संस्थाओं और स्थानीय निकायों में एक साथ चुनाव कराने का उद्देश्य राजनीतिक स्थिरता, प्रशासनिक निरंतरता और संसाधनों का बेहतर उपयोग सुनिश्चित करना है। एक साथ चुनाव होने से चुनावी खर्च में बचत के साथ सरकारी मशीनरी पर बार-बार पड़ने वाला दबाव कम होगा और विकास कार्यों की निरंतरता बनाए रखने में मदद मिलेगी।

राजेश्वर सिंह ने कहा कि नगर निकाय चुनाव के लिए करीब 18 हजार मतदान केंद्र, जबकि पंचायती राज चुनाव के लिए लगभग 48 हजार मतदान केंद्र स्थापित किए जाएंगे। नगर निकाय चुनाव की चरणबद्ध व्यवस्था के तहत 39 जिलों में दो चरणों में चुनाव कराने की तैयारी है, जबकि फलोदी और सलुम्बर में एक चरण में मतदान कराया जाएगा। वहीं, पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव 36 जिलों में चार चरणों, चार जिलों में दो चरणों और एक जिले में एक चरण में कराने की व्यवस्था प्रस्तावित है। जैसलमेर में एक चरण में चुनाव कराने की तैयारी है।

ईवीएम से सदस्य, मतपेटी से पंच-सरपंच का चुनाव = चुनाव में नगर निकाय सदस्यों, पंचायत समिति सदस्यों और जिला परिषद सदस्यों के लिए ईवीएम से मतदान कराया जाएगा। वहीं, पंच और सरपंच के निर्वाचन के लिए मतपेटियों का इस्तेमाल किया जाएगा। आयोग ने चुनाव प्रक्रिया को स्वतंत्र, निष्पक्ष और शांतिपूर्ण तरीके से संपन्न कराने के लिए संबंधित विभागों के बीच बेहतर समन्वय पर जोर दिया है।

राज्य निर्वाचन आयोग के सचिव राजेश वर्मा ने बताया कि नगर निकाय चुनाव के प्रथम चरण में 140 नगर निकायों, 5,050 वार्ड और 10,185 मतदान केंद्रों के लिए 71,295 सिविल निर्वाचन कार्मिक और 61,110 पुलिस कार्मिकों की आवश्यकता होगी। दूसरे चरण में 169 नगर निकायों और 5,195 वार्डों के लिए

43,960 सिविल निर्वाचन कार्मिकों की आवश्यकता बताई गई है। बैठक में नामांकन, संवीक्षा और नाम वापसी के दौरान भी पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था रखने के निर्देश दिए गए। संवेदनशील परिस्थितियों में आवश्यक पुलिस बल की उपलब्धता सुनिश्चित करने पर भी जोर दिया गया।

आरक्षण और अधिकारियों के तबादले पर आयोग की नजर- आयोग ने पदों के आरक्षण संबंधी प्रक्रिया जल्द पूरी करने और इसकी प्रगति से आयोग को अवगत कराने के निर्देश दिए हैं। इसके अलावा चुनाव से सीधे जुड़े अधिकारियों और कार्मिकों के स्थानांतरण को लेकर भी आयोग ने स्पष्ट समयसीमा तय की है। 15 अगस्त 2026 तक संबंधित अधिकारियों के स्थानांतरण और पदस्थापन की प्रक्रिया पूरी करने के निर्देश हैं। आयोग के अनुसार ऐसे कार्मिकों को चुनावी जिम्मेदारी नहीं दी जाएगी, जिनके खिलाफ पिछले चुनावों में भारत निर्वाचन आयोग या राज्य निर्वाचन आयोग की ओर से चुनाव संबंधी लापरवाही को लेकर कार्रवाई के निर्देश दिए गए हो।

आमंत्रित किया है। इसके लिए आम आदमी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, भारतीय जनता पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी), भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, नेशनल पीपुल्स पार्टी, राष्ट्रीय लोकतांत्रिक पार्टी और भारत आदिवासी पार्टी के प्रदेश अध्यक्षों को सूचना भेजी गई है। डीएलबी डायरेक्टर जूईकर प्रतीक चंद्रशेखर ने बताया कि राजनीतिक दलों से कहा गया है कि वे अपने अधिकृत प्रतिनिधि को निर्धारित समय पर उपस्थित होने के लिए निर्देशित करें। लॉटरी प्रक्रिया में निकायों के महापौर, सभापति और अध्यक्ष पदों पर आरक्षण की स्थिति तय होगी।

उन्होंने बताया कि नगरीय निकाय चुनाव-2026 के लिहाज से ये प्रक्रिया महत्वपूर्ण मानी जा रही है। आरक्षण तय होने के बाद संबंधित निकायों में चुनाव लड़ने की तैयारी कर रहे संभावित दावेदारों की स्थिति भी स्पष्ट हो सकेगी। वहीं, राजनीतिक दलों को भी अलग-अलग निकायों में उम्मीदवार चयन और चुनावी रणनीति बनाने में मदद मिलेगी। बहरहाल, 13 अगस्त की लॉटरी के बाद ये स्पष्ट हो जाएगा कि 309 नगरीय

और समय तय कर दिया है। आरक्षण को लेकर होने वाली यह लॉटरी 13 अगस्त 2026 को दोपहर 3:15 बजे जवाहर लाल नेहरू मार्ग स्थित इंदिरा गांधी पंचायती राज संस्थान के सभागार में निकाली जाएगी। राजस्थान सरकार के ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग की ओर से इस संबंध में आदेश जारी किए गए हैं।

41 जिला परिषदों में जिला प्रमुख के पदों का होगा निर्धारण: विभाग की ओर से जारी आदेशों में कहा गया है कि पंचायत राज संस्थाओं के आम चुनाव-2026 के लिए प्रदेश के 41 जिला परिषदों में जिला प्रमुख के पदों तथा पंचायत समितियों में प्रधान के पदों के आरक्षित पदों का श्रेणीवार आवंटन किया जाना है। यह पूरी प्रक्रिया राजस्थान पंचायती राज

अधिनियम, 1994 और इसके

तहत बनाए गए नियमों के

प्रावधानों के अनुसार होगा। लॉटरी

के जरिए यह तय होगा कि किस

जिला परिषद में जिला प्रमुख का

पद और किस पंचायत समिति में

प्रधान का पद किस श्रेणी के लिए

आरक्षित रहेगा। वहीं लॉटरी

प्रक्रिया पूरी होने के बाद पंचायत

चुनावों की तस्वीर काफी हद तक

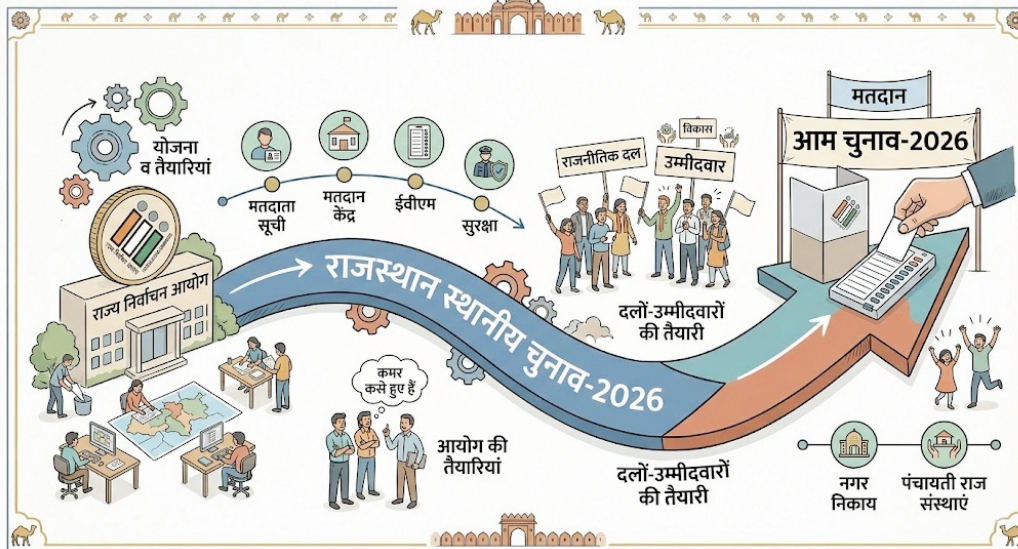
साफ हो जाएगी। खासतौर पर

जिला प्रमुख और पंचायत समिति

प्रधान पदों के संभावित दावेदारों

की राजनीतिक तैयारियां भी

आरक्षण की स्थिति सामने आने के बाद तेज होने की संभावना है।



निकाय-पंचायत चुनाव की तैयारियों ने पकड़ी रफ्तार- बैठक में गृह, नगरीय विकास एवं आवासन, वित्त, राजस्व, पुलिस, स्थानीय निकाय, पंचायती राज और कार्मिक विभाग की तैयारियों की समीक्षा की गई। कुल मिलाकर आयोग ने चुनावी मशीनरी को समयबद्ध तरीके से तैयार करने पर जोर दिया है। वन स्टेट-वन इलेक्शन की सरकार की मंशा के बीच आयोग की यह समीक्षा स्थानीय निकाय और पंचायत चुनावों की प्रक्रिया आगे बढ़ने का महत्वपूर्ण संकेत मानी जा रही है।

13 अगस्त को होगा निकाय चुनाव में महापौर और अध्यक्ष पदों के आरक्षण का लॉटरी से निर्धारण, वार्ड आरक्षण तिथि पर अभी भी असमंजस- प्रदेश के 309 नगरीय निकायों में निकायों के प्रमुख पद किस वर्ग के होंगे इसका निर्धारण 13 अगस्त को हो जाएगा। राजस्थान में आगामी नगरीय निकाय चुनाव-2026 को लेकर महापौर, सभापति और अध्यक्ष पदों के आरक्षण की प्रक्रिया को लेकर स्वायत्त शासन विभाग की ओर से सूचना जारी की गई है। राज्य के 309 नगरीय निकायों में महापौर/सभापति/अध्यक्ष पदों के लिए आरक्षण लॉटरी के माध्यम से तय किया जाएगा। ये लॉटरी 13 अगस्त को सुबह 10:30 बजे स्वायत्त शासन विभाग के सभागार में निकाली जाएगी।

स्वायत्त शासन विभाग ने सभी राजनीतिक दलों को भी लॉटरी प्रक्रिया में प्रतिनिधि भेजने के लिए

निकायों में किन निकायों के प्रमुख पद सामान्य, महिला, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य आरक्षित वर्गों के लिए निर्धारित होंगे। हालांकि,

वाडों के आरक्षण को लेकर अभी कोई तारीख घोषित नहीं की गई है। वार्डवार आरक्षण की प्रक्रिया कब होगी, इसे लेकर स्वायत्त शासन विभाग की ओर से अभी अलग से कार्यक्रम जारी किया जाएगा। ऐसे में पार्षद पद के संभावित दावेदारों को वार्ड आरक्षण की तारीख का इंतजार है।

पंचायत चुनाव से पहले जिला प्रमुख और पंचायत समिति प्रधान के पदों के आरक्षण का निर्धारण किया जाएगा। इसके लिए सरकार ने लॉटरी की तारीख

प्रसंगत:

एक व्यापारी था. वह व्यापार करने के लिए किसी दूर देश में जा रहा था. रास्ते में रात हो गई तो वह एक गांव में एक गरीब आदमी की झोंपड़ी में ठहर गया. रात बिताकर बड़े तड़के आगे बढ़ गया. उसके चले जाने के बाद गरीब की स्त्री ने देखा कि एक तरफ को कुछ पड़ा है तो उसने उसे उठा लिया. एक चीख उसके मुंह से निकल गई. उसका आदमी बाहर कुछ काम कर रहा था. दौड़कर अंदर आया. स्त्री ने कहा, “देखो तो, यह क्या गजब हो गया है!” वह अशर्फियों की थैली थी. स्त्री-पुरुष दोनों परेशानी में पड़ गये. व्यापारी तो बहुत पहले जा चुका था. उन्होंने तो यह भी नहीं पूछा था कि वह कहां से आया है और कहां जायगा? “अब क्या होगा?” स्त्री ने कहा. आदमी बोला, “अब हम कर भी क्या सकते हैं!” थैली उन्होंने रख ली और उस आदमी के आने की प्रतीक्षा करने लगे. उन्हें विश्वास था कि इतनी बड़ी रकम खो जाने पर वह दूंदता हुआ अवश्य आवेगा. पर दिन-पर-दिन बीतते गये और वह आदमी नहीं आया. जब थैली के गुम होने का उसे पता चला तो उसने समझ लिया कि कहीं रास्ते में गिर गई और कोई लेकर चम्पत हो गया. व्यापारियों के जीवन में ऐसी घटनाएं होना तो मामूली बात हैं. काफी दिनों के बाद एक दिन वे लोग देखते क्या हैं कि वहीं व्यापारी लौटकर आया है. वह आगे बढ़ रहा था कि उन्होंने उसे रोका और झोंपड़ी में अंदर ले जाकर वह थैली उसके सामने रख दी. व्यापारी को अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ. उसने कहा, “आप आदमी नहीं, फरिश्ता हैं. आप लोगों ने जो किया है, वह फरिश्ते ही कर सकते थे. पैसे का लालच बहुत बड़ा और बुरा होता है, वह आदमी को शैतान बना देता है.” इतना कहकर उसने कुछ अशर्फियां उन्हें देनी चाहीं, लेकिन उन्होंने लेने से इन्कार कर दिया. कहा, “आपकी थैली आपके पास पहुंच गई, इससे बड़ा इनाम हमारे लिए और क्या हो सकता है!”

फरिश्ते

क्यों लगातार गिर रहा है भारतीय रुपया?

अभिनव

भारतीय रुपया मोदी सरकार के कार्यकाल के दौरान अपने निम्नतम स्तर पर पहुंच चुका है। इस समय भारतीय रुपया एशिया की सबसे खराब प्रदर्शन करने वाली मुद्रा है। मोदी जी ने प्रधानमंत्री बनने से पहले (और प्रधानमंत्री बनने के लिए!) यह बयान दिया था कि किसी देश की मुद्रा का गिरना उस देश की अर्थव्यवस्था और उसकी प्रतिष्ठा का गिरना है। मतलब, एक बार उन्होंने सच बोला था! लेकिन अब मोदी सरकार के मंत्री (क्योंकि खुद मोदी जी किसी ठोस प्रश्न पर कुछ बोलते ही नहीं हैं) कह रहे हैं कि 'रुपया अपना स्तर खुद ढूँढ लेगा, चिन्तित होने की कोई बात नहीं है।' सही बात है! देश के अमीरजदों और धनासेठों के लिए निश्चित ही कोई चिन्तित होने की बात नहीं है। लेकिन देश के गरीबों को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ रही है और आगे इससे भी भयंकर कीमत चुकानी पड़ेगी।

लेकिन भारतीय रुपया गिर क्यों रहा है? जाहिर है कि इसके लिए गुरुत्वाकर्षण की शक्ति तो जिम्मेदार नहीं है! हम मजदूरों-मेहनतकशों को भी समझना चाहिए कि हमारे देश की मुद्रा के इस अभूतपूर्व अवमूल्यन के कारण क्या हैं। यह लेख लिखे जाने तक भारतीय रुपया अपने ऐतिहासिक निम्न स्तर पर पहुंच चुका था - 1 अमेरिकी डॉलर में 96 रुपये। मई 2025 में 1 अमेरिकी डॉलर 85 रुपये के बराबर था और साल भर के भीतर ही यह 96 रुपये के करीब पहुंच गया है और कई अर्थशास्त्री अभी से ही इस बात का कयास लगा रहे हैं कि भविष्य में यह 100 के निशान को भी पार कर जायेगा। इस भारी गिरावट की वजह क्या है? हम बुनियादी सरल बातों को समझते हुए इन वजहों को समझेंगे।

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा विनिमय-दर क्या है?

अन्तरराष्ट्रीय विनिमय-दर यह बताती है कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा बाजार में किसी राष्ट्रीय मुद्रा की क्या कीमत है। सटीक वैज्ञानिक अर्थों में कहा जाय तो मुद्रा की कोई कीमत नहीं होती, बल्कि मुद्रा ही वह इकाई व माध्यम है जिसमें कीमत को अभिव्यक्त किया जाता है। दूसरे शब्दों में, मुद्रा की कीमत की बात करना वैसा ही है

जैसा कि यह कहना कि 1 किलोग्राम का वजन 1 किलोग्राम है। यानी, एक मूर्खतापूर्ण दुहराव। लेकिन बुर्जुआ अर्थशास्त्री इसी प्रकार के गोल चक्करों में फँसे होते हैं।

तो फिर विनिमय दर का अर्थ क्या हुआ? यह किसी भी देश की राष्ट्रीय मुद्रा की अन्य राष्ट्रीय मुद्राओं की तुलना में सापेक्षिक मूल्य को प्रदर्शित करता है। मुद्राएं हमेशा राष्ट्रीय वर्दियाँ पहने होती हैं, जैसा कि मार्क्स ने बताया था। यानी अलग-अलग

देशों की अलग-अलग मुद्राएं होती हैं, उनके नाम, उनके चिह्न अलग-अलग होते हैं, उनकी पोशाक अलग-अलग होती हैं। जब एक राष्ट्रीय मुद्रा को दूसरी राष्ट्रीय मुद्रा में परिवर्तित किया जाता है, तो उनके सापेक्षिक मूल्य के अनुसार ही उनके विनिमय की दर तय होती है।

यह भी याद रखना चाहिए कि मौजूदा दौर पूर्ण रूप से स्वर्ण-असमर्थित कागजी मुद्रा का है। एक दौर था जब सोने और चांदी की मुद्राएं चलती थीं। उसके बाद, सोने और चांदी की मुद्राओं की प्रतिनिधि धातु मुद्राओं जैसे तांबा, काँसा आदि की मुद्राओं का दौर आया जो सोने/चांदी की मुद्रा की निश्चित मात्राओं की नुमाइन्दगी करती थीं। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि धात्विक मुद्राओं का संचरण ही उन्हें घिस डालता है और वास्तव में ये धात्विक मुद्राएं कालान्तर में उक्त धातु (मसलन सोना या चांदी) की उतनी मात्रा की नहीं रह जाती हैं, जितनी वे मूलतः थीं। जैसे कि अगर सोने का कोई सिक्का 20 ग्राम का था, तो 2 वर्ष परिचलन में रहने के बाद वह महज 17 ग्राम का रह जाता है क्योंकि उसकी घिसाई हो जाती है। लेकिन बाजार में अभी भी वह 20 ग्राम सोने के मूल्य की ही नुमाइन्दगी करता है। इस प्रकार यह घिसा हुआ सिक्का अब 20 ग्राम सोने का प्रतिनिधि बन जाता है, वह उसका प्रतीक बन जाता है। इसी वजह से कालान्तर में सोने व चांदी के सिक्कों के साथ या उनकी जगह सस्ती धातुओं के सिक्के परिचलन में आ गये। सस्ती धातु का हर सिक्का सोने या चांदी की एक निश्चित मात्रा का प्रतीक मात्र होता है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि पूरा समाज इसे सोने के प्रतीक के तौर स्वीकार करे, इसके लिए इस सिक्के को राज्यसत्ता से वैधीकरण मिलना चाहिए, यानी उसकी मुहर इस पर लगी होनी चाहिए।

बहरहाल, इसी बुनियादी तर्क के कारण सस्ती धातुओं के सिक्कों के बाद ऐसी कागजी मुद्राओं का दौर आया जो सोने/चांदी की मुद्रा की निश्चित मात्राओं की नुमाइन्दगी करती थीं, लेकिन शुरुआत में इन कागजी मुद्राओं को राज्य के केन्द्रीय बैंक की खिड़कियों पर सोने/चांदी की मुद्रा

में तब्दील किया जा सकता था। ये स्वर्ण-समर्थित सोने में परिवर्तनीय कागजी मुद्रा थी, जो सोने में आधिकारिक तौर पर



सरकारी बैंक की खिड़की पर परिवर्तनीय थी। इसके बाद ऐसी कागजी मुद्रा का दौर आया जिसका मूल्य स्वर्ण-मुद्रा द्वारा ही निर्धारित होता था, लेकिन वह आधिकारिक तौर पर सरकारी बैंक की खिड़कियों पर सोने/चांदी में परिवर्तनीय नहीं थी। यह स्वर्ण-समर्थित आधिकारिक तौर पर सोने में अपरिवर्तनीय कागजी मुद्रा थी।

अन्ततः, 1930 के दशक से एक प्रक्रिया शुरू हुई जो 1970 के दशक में मकाम पर पहुंची, जिसमें एक कागजी मुद्रा अस्तित्व में आयी जो आधिकारिक तौर पर स्वर्ण-समर्थित भी नहीं थी, यानी, जिसका मूल्य सोने या किसी मुद्रा-माल (ऐसा माल जो मुद्रा की भूमिका सार्वभौमिक तौर पर अदा करता हो) द्वारा निर्धारित नहीं होती थी। इसे शुद्ध रूप से फ़िक्टेड मुद्रा कहा जाता है, जो औपचारिक और आधिकारिक तौर पर किसी एक मुद्रा-माल द्वारा समर्थित नहीं है। पूंजीवादी माल उत्पादन के विकास के साथ मुद्रा के मामले धात्विक बैरियर को एक न एक दिन टूटना ही था। मार्क्स का मुद्रा का सिद्धान्त ही इस परिघटना को समझने के बुनियादी उपकरण दे देता है। आज इस पूर्ण रूप से कागजी मुद्रा का मूल्य देश में कुल मालों (वस्तुओं और सेवाओं) के मूल्य से और पूंजी निवेश हेतु मुद्रा-पूंजी की मांग के स्तर से निर्धारित होती है, जो मांग स्वयं किसी अर्थव्यवस्था में मुनाफे की औसत दर से निर्धारित होती है। यदि इस कागजी मुद्रा को कुल माल उत्पादन के मूल्य और मुद्रा-पूंजी की मांग की तुलना में ज्यादा छपा जाता है, तो देश में उसका मूल्य गिरेगा और महंगाई बढ़ेगी।

लेकिन ऐसा बिल्कुल मुमकिन है कि देश के भीतर कागजी मुद्रा के अधिक छापे जाने या न छापे जाने से बिल्कुल स्वतन्त्र अन्तरराष्ट्रीय बाजार में किसी देश की मुद्रा का अन्य देशों की मुद्राओं की तुलना में अवमूल्यन हो, या कुछ देशों की मुद्राओं की तुलना में उनका अवमूल्यन हो। इसलिए अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा विनिमय-दरें शुद्ध रूप से देश के भीतर किसी मुद्रा के अन्य मालों की तुलना में अवमूल्यन या उनके मूल्य के बढ़ने से तय नहीं होती हैं। फिर उन्हें तय करने वाले कारक क्या होते हैं?

इसको इस प्रकार से समझें। अन्तरराष्ट्रीय बाजार में जब किसी मुद्रा की मांग अन्य मुद्रा/मुद्राओं के सापेक्ष बढ़ती है, तो उस मुद्रा या उन मुद्राओं के सापेक्ष इस मुद्रा का मूल्य बढ़ता है। इसके उलट, अगर अन्य मुद्रा/मुद्राओं के सापेक्ष इस मुद्रा की मांग घटती है, तो उस मुद्रा या उन मुद्राओं के सापेक्ष इस मुद्रा का मूल्य घटता है। यानी, अगर डॉलर को रुपये में परिवर्तित करने की जितनी मांग है, उसके मुकाबले रुपये को डॉलर में परिवर्तित करने की मांग ज्यादा है, तो रुपये का मूल्य डॉलर की तुलना में गिरेगा और अगर इसका उल्टा है तो रुपये का मूल्य डॉलर की तुलना में बढ़ेगा। लेकिन किसी भी मुद्रा की तुलना में रुपये की मांग में बढ़ोत्तरी या कमी होने के पीछे क्या कारक काम करते हैं?

किसी मुद्रा की विनिमय-दर को प्रभावित करने वाले बुनियादी कारक क्या हैं?

सबसे पहला और बुनियादी कारक है व्यापार-सन्तुलन। अगर भारत देश किसी अन्य देश या देशों को निर्यात कम करता है और उससे या उनसे आयात ज्यादा करता है, तो उन देशों के साथ उसका नकारात्मक व्यापार-सन्तुलन होगा, या उन देशों के सापेक्ष भारत व्यापार-घाटा झेल रहा होगा। ऐसा होने पर रुपये की मांग उस देश या उन देशों की मुद्रा की तुलना में घटेगी। अगर भारत इन देशों को निर्यात ज्यादा करता है और उनसे आयात कम करता है, तो इसका उलट होगा। यानी उन देशों के सापेक्ष भारत का व्यापार-सन्तुलन सकारात्मक होगा और उन देशों का भारत के सापेक्ष व्यापार-घाटा होगा। ऐसा होने पर उन देशों की मुद्राओं (या जिस मुद्रा या जिन मुद्राओं में वे अन्तरराष्ट्रीय व्यापार करते हैं) की तुलना में रुपये की मांग बढ़ेगी और उसका मूल्य भी इन मुद्राओं की तुलना में बढ़ेगा।

अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में इस समय अधिकांश देश जिस मुद्रा का सबसे ज्यादा इस्तेमाल करते हैं, वह है अमेरिकी डॉलर, हालांकि यह रुझान पिछले दो-तीन दशकों से घट रहा है। लेकिन अभी भी जिस मुद्रा में अन्तरराष्ट्रीय व्यापार सबसे ज्यादा होता है, वह डॉलर ही है। इस वजह से अन्य देश भी अपने विदेशी मुद्रा भण्डार में पर्याप्त मात्रा में डॉलर चाहते हैं और प्रभावतः वे अमेरिका से डॉलर अपनी वस्तुओं और सेवाओं के बदले खरीदते हैं क्योंकि अन्य देशों से व्यापार में भी उन्हें अक्सर ही डॉलर की आवश्यकता पड़ती है। लेकिन डॉलर की यह बिना किसी चुनौती वाली वर्चस्वकारी स्थिति नहीं रह गयी है, हालांकि अभी भी विश्व व्यापार में सबसे ज्यादा इस्तेमाल की जाने वाली मुद्रा डॉलर ही है। बहरहाल, ऐसे

में, अगर भारत का कुल माल निर्यात उसके कुल माल आयात से कम होगा, तो रुपये का मूल्य डॉलर के मूल्य की तुलना में गिरेगा। इसे करेण्ट एकाउण्ट डेफिसिट कहा जाता है। यानी, आयात-निर्यात का भारत वर्तमान सन्तुलन नकारात्मक में है।

जब किसी देश का व्यापार सन्तुलन नकारात्मक में होता है, यानी उसे व्यापार घाटा हो रहा होता है, तो इसका उस देश की मुद्रा के लिए क्या निहितार्थ होता है? एक उदाहरण से समझते हैं। जब कोई निर्यातक पूंजीपति हमारे देश में मजदूरों का शोषण कर जिस माल का उत्पादन करता है, उसे विदेशी बाजार में बेचता है, तो उसे डॉलर, यूरो, आदि मुद्राओं में भुगतान प्राप्त होता है जिसे वह हमारे देश में रुपयों में परिवर्तित करता है। यानी भारतीय रुपये की मांग बढ़ती है। नतीजतन, डॉलर/यूरो आदि के सापेक्ष भारतीय रुपये का मूल्य भी बढ़ता है और उसकी विनिमय-दर बढ़ती है। उसके विपरीत, जब निर्यात के सापेक्ष भारत के आयात बढ़ते हैं, तो रुपयों को अन्य मुद्राओं, मसलन, डॉलर, यूरो आदि में परिवर्तित करने की मांग बढ़ती है। यानी, रुपयों के सापेक्ष इन अन्य विदेशी मुद्राओं की मांग और मूल्य बढ़ता है।

संक्षेप में, अगर भारत के आयात भारत के निर्यात से ज्यादा हैं, तो इसे बाकी दुनिया को विदेशी मुद्राओं में जो भुगतान करना होता है, वह विदेशी मुद्राओं में उसे प्राप्त होने वाले भुगतान की मात्रा से ज्यादा होता है और नतीजतन भारतीय मुद्रा अन्य प्रमुख विदेशी मुद्राओं के तुलना में अवमूल्यन का शिकार होती है। अगर भारत के निर्यात उसके आयात से ज्यादा होते, तो उसे बाकी दुनिया को विदेशी मुद्राओं में जितना भुगतान करना होता उससे ज्यादा भुगतान विदेशी मुद्राओं में उसे प्राप्त होते। पहले मामले में अन्य विदेशी मुद्राओं में रुपयों को परिवर्तित करने की मांग अन्य विदेशी मुद्राओं को रुपयों में परिवर्तित करने की मांग से ज्यादा होगी और दूसरे मामले में अन्य विदेशी मुद्राओं में रुपयों को परिवर्तित करने की मांग अन्य विदेशी मुद्राओं को रुपयों में परिवर्तित करने की मांग से कम होगी। पहली स्थिति में रुपये की मांग सापेक्षिक रूप से घटने के कारण वह अन्य विदेशी मुद्राओं की तुलना में अवमूल्यन होगा और दूसरी स्थिति में रुपये की मांग सापेक्षिक रूप से बढ़ने के कारण वह अन्य विदेशी मुद्राओं की तुलना में मजबूत होगा, यानी उसका सापेक्षिक मूल्य बढ़ेगा।

भारत द्वारा लगातार लम्बे समय से झेला जाने वाला और बढ़ रहा करेण्ट अकाउण्ट घाटा वास्तव में भारतीय पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की कमजोरी को दिखलाता है। अन्य कारकों की पुष्टि की स्थिति में (जिन पर हम आगे आयेँगे) यह दिखलाता है कि उत्पादक उद्यमों में पर्याप्त निवेश नहीं हो रहा है। पर्याप्त निवेश न होने की वजह क्या है? इसकी वजह यह है कि देश में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की मुनाफे की औसत दर कम है। यह सच है कि अकेले व्यापार-घाटा ही मुनाफे की औसत

दर के संकट को नहीं सिद्ध करता है। बहुत-से ऐसे पूंजीवादी देश हैं, जो व्यापार-घाटा झेल रहे होते हैं लेकिन उसके बावजूद उनकी अर्थव्यवस्था उस क्षण लाभप्रदता के संकट से नहीं गुजर रही होती है। दूसरे शब्दों में, अकेले व्यापार-घाटा ही मुनाफे की दर के संकट को नहीं प्रदर्शित करता है। व्यापार-घाटा किसी देश की विश्व पूंजीवादी व्यवस्था में विशिष्ट अवस्थिति के कारण भी हो सकता है। लेकिन यह उस अर्थव्यवस्था में मुनाफे की औसत दर के गिरने के संकट की एक सम्भव अभिव्यक्ति भी हो सकता है।

अगर किसी देश की अर्थव्यवस्था से विशेष तौर पर प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश पलायन कर रहा है, तो यह स्पष्ट तौर पर उक्त देश में मुनाफे की गिरती औसत दर के संकट को प्रदर्शित करता है। उड़नछू पूंजी, यानी सट्टेबाज़ पूंजी के पोर्टफोलियो निवेश के आने या जाने की दर अपने आप में, मुनाफे की औसत दर के संकट के बारे में कुछ नहीं बताती। असल चीज़ है प्रत्यक्ष विदेशी निवेश जो उत्पादक उद्यमों में लगता है, यानी मैनुफैक्चरिंग इकाइयों, कारखानों, सेवाओं के उत्पादन आदि में।

अगर विदेशी निवेश (दोनों प्रकार का) घट रहा है और कुल पूंजी प्रवाह नकारात्मक में है (यानी जितनी पूंजी आ रही है, उससे ज्यादा पूंजी जा रही है) तो यह दिखलाता है कि रुपये में आकलित एसेट्स में पूंजी निवेश घट रहा है, जबकि अन्य, विशेषकर डॉलर वाले एसेट्स, में निवेश बढ़ रहा है। दूसरे शब्दों में, जो पूंजी निवेश के लिए भारत आती है और विशेष तौर पर वह जो कि उत्पादक उपक्रमों में लगती है वह भारतीय रुपये के लिए मौजूद मांग को बढ़ाती है। जबकि जो पूंजी भारत में निवेशित उपक्रमों से पलायन करती है, वह रुपये के लिए मौजूद मांग को घटाती है। इसलिए अगर कुल पूंजी प्रवाह या उसका आवागमन नकारात्मक में है, तो यह भारतीय रुपये के लिए मांग को घटायेगा। नतीजतन, रुपये का मूल्य अन्य विदेशी मुद्राओं, विशेषकर डॉलर के सापेक्ष गिरेगा। यहाँ तक कि घरेलू निवेशक भी अगर भारत में निवेश करने के बजाय किसी अन्य देश में निवेश ज्यादा करते हैं, तो यह रुपये के सापेक्षिक मांग और इसलिए अन्तरराष्ट्रीय बाजार में अन्य विदेशी मुद्राओं की तुलना में उसके सापेक्षिक मूल्य में गिरावट लायेगा। यह परिघटना भी इस समय बड़े पैमाने पर सामने आ रही है।

यानी, जब भी करेण्ट एकाउण्ट घाटा बढ़ेगा और साथ ही पूंजी का शुद्ध प्रवाह नकारात्मक होगा, तब अन्तरराष्ट्रीय बाजार में रुपये के मूल्य पर गिरने का दबाव पैदा होगा। हम हालिया वर्षों में हर उस दौर को देख सकते हैं, जबकि रुपया तेज़ी से गिरा है और यह बात शब्दशः सही साबित होती है। ये ठीक वे ही दौर हैं जब व्यापार घाटा बढ़ा है और पूंजी का पलायन बढ़ा है। मिसाल के तौर पर, अप्रैल-सितम्बर 2013 जब रुपया 54.4 रुपया प्रति डॉलर से गिरकर 63.8 रुपया हो गया; जनवरी-अक्टूबर 2018 जब रुपया 63.6 से गिरकर 73.6 प्रति डॉलर हो गया; जनवरी-अक्टूबर 2022 जब रुपया 74.4 से गिरकर 82.3 प्रति डॉलर हो गया;

सितम्बर 2024 से फ़रवरी 2025 जब रुपया 83.3 से 87.1 प्रति डॉलर पहुँच गया; और अब का दौर यानी मई 2025 से मई 2026 जब यह 85.2 से करीब 96 प्रति डॉलर तक पहुँच गया। ये सारी अवधियाँ वे अवधियाँ हैं जब व्यापार घाटा बढ़ा है और भारत में देश के भीतर और बाहर दोनों से ही पूंजी निवेश सापेक्ष तौर पर कम हुआ है। यानी जितनी पूंजी अर्थव्यवस्था में आयी है, उससे ज्यादा बाहर गयी है। पूंजी हमेशा मुनाफ़ा ढूँढ़ती है। अगर किसी अर्थव्यवस्था से पूंजी का बाहर की ओर प्रवाह अन्दर की ओर होने वाले प्रवाह से ज्यादा है, तो यह लाभप्रदता के संकट की एक अभिव्यक्ति होती है।

भारत को व्यापार-घाटे के बरक्स

प्रमुख वजह ही भारतीय अर्थव्यवस्था में मुनाफे की औसत दर का गिरना है क्योंकि निवेश की दर अभी गिरती है जब लाभप्रदता कम होती है।

अब देख लेते हैं कि मौजूदा भारतीय अर्थव्यवस्था में करेण्ट अकाउण्ट (यानी व्यापार-सन्तुलन) की क्या स्थिति है। करेण्ट अकाउण्ट घाटा 2024-25 में 23.1 अरब डॉलर का था। यह और ज्यादा होता, अगर सेवाओं, विशेषकर सॉफ्टवेयर व तथाकथित अदृश्य मालों का निर्यात भारत से बढ़ा न होता। वजह यह कि अगर ठोस वस्तुओं के व्यापार में घाटे को देखें तो यह 2023-24 के 244.9 अरब डॉलर से बढ़कर 286.9 अरब डॉलर तक पहुँच गया था। कैपिटल अकाउण्ट की बात करें तो

के दर्ज़नों शहरों में मजदूर वर्ग द्वारा बेहतर मजदूरी और बेहतर कार्य-स्थितियों के लिए फूट पड़े स्वतः स्फूर्त संघर्षों ने दिखलाया है।

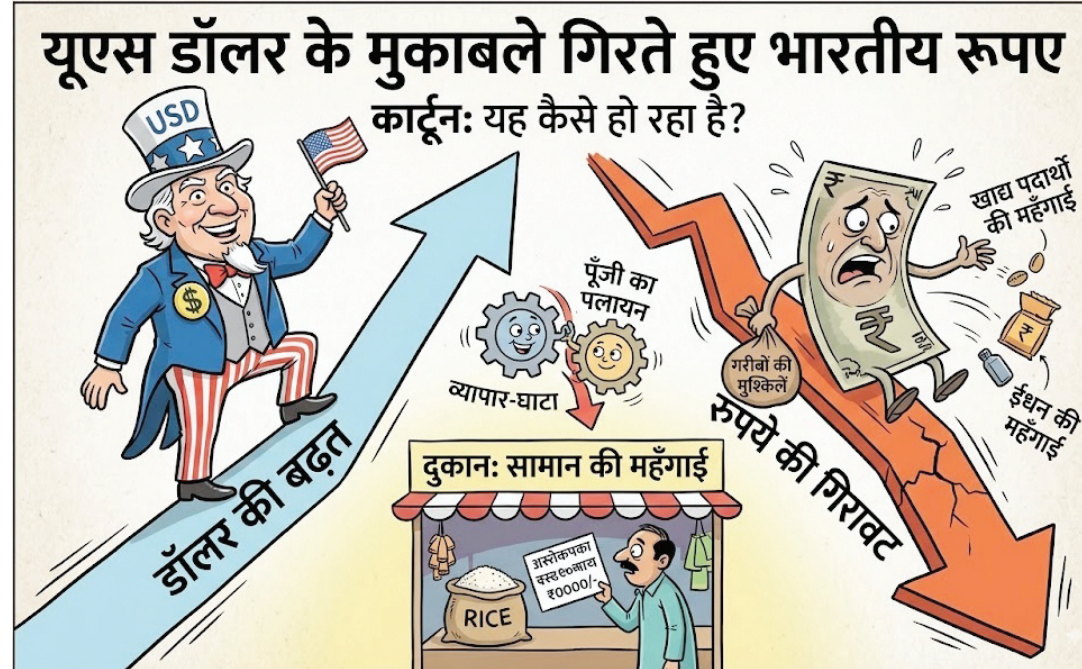
पूँजी का बाहर की ओर प्रवाह और व्यापार-घाटा किस आधारभूत कारक की ओर इशारा करते हैं?

पूँजी का बाहर की ओर प्रवाह और व्यापार-घाटा और उसके नतीजे के तौर पर किसी देश की मुद्रा का लगातार गिरना वास्तव में मुनाफे की औसत दर के गिरने के संकट को दिखलाता है। क्यों? भारत के निवेशक और साथ ही विदेशी निवेशकों द्वारा भारत से पूंजी का विनिवेश

परिलक्षित करता है। चूँकि दुनिया भर में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था लाभप्रदता के संकट का शिकार है, इसलिए अधिकांश भारतीय पूंजीवादी निवेशक जो अपनी पूंजी को भारत से बाहर ले जा रहे हैं, वे भी वित्तीय उपकरणों जैसे इक्विटी व बॉण्ड्स आदि में ज्यादा निवेश कर रहे हैं। पिछले वर्ष के मुक़ाबले भारतीय निवेशकों ने विदेशी बाजारों में निवेश में 60 प्रतिशत से ज्यादा बढ़ोत्तरी करते हुए, 2.2 अरब डॉलर से ज्यादा निवेश किया है।

पश्चिम एशिया में ईरान पर अमेरिका और जायनवादी सेटलर औपनिवेशिक राज्य इज़रायल द्वारा थोपे गये साम्राज्यवादी हमले के कारण निश्चित तौर पर स्थितियाँ भारत के लिए बद से बदतर हुई हैं। लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था के संकट का मूलभूत कारण पश्चिम एशिया में युद्ध नहीं है। युद्ध से पहले ही भारतीय अर्थव्यवस्था लाभप्रदता के संकट से जूझ रही थी। युद्ध के शुरू होने के बाद, भारत को दो संकटों का सामना करना पड़ा है: पहला, पेट्रोलियम उत्पादों की आपूर्ति में कमी और उनकी कीमतों में बढ़ोत्तरी (हालांकि मोदी सरकार ने पिछले 12 वर्षों में पेट्रोलियम उत्पादों पर

अप्रत्यक्ष करों का बोझ जिस क़दर बढ़ाया है, उसके कारण तेल कम्पनियों को आज भी घाटा नहीं बल्कि अरबों रुपये का फ़ायदा हो रहा है) और दूसरा, विशेष तौर पर पश्चिम एशिया के देशों में काम करने वाले भारतीय मज़दूरों का वापस लौटना जिसके कारण उनके द्वारा भेजी जाने वाली भारी विदेशी मुद्रा में कमी आना और साथ ही देश के भीतर रोज़गार के संकट का और ज्यादा गहराना। 10 लाख से ज्यादा भारतीय मज़दूर पश्चिम एशिया से भारत वापस लौट चुके हैं। वैसे तो अहम सवाल यह है कि भारतीय मज़दूरों को परदेस जाकर गुलामों जैसी स्थिति में खटना ही क्यों पड़ता है? हमारे देश में उन्हें जीवन-यापन योग्य मज़दूरी के साथ और सम्मान के साथ रोज़गार क्यों नहीं प्राप्त होता है? बहरहाल, अभी हम इस सवाल पर चर्चा नहीं करेंगे।



भुगतान करने के लिए विदेशी मुद्रा चाहिए होती है। यह विदेशी मुद्रा उसे एफ़.डी.आई. और मुख्य रूप से एफ़.पी.आई. से मिलती है। एफ़.पी.आई. जो कि सट्टेबाज़ उड़नछू पूंजी है, वह अपनी प्रकृति से ही अटकलों पर चलती है। मसलन, अगर भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि के प्रोजेक्शन ऊँचे होंगे, तो वह भारतीय बाजार में निवेशित होती है अन्यथा वह भारतीय बाजारों से उड़नछू हो जाती है। अब जबकि भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि के भावी आकलन नीचे आ रहे हैं, तो यह उड़नछू पूंजी अपनी असल प्रकृति दिखाते हुए उड़नछू हो रही है! भारत में सकल अचल पूंजी निर्माण की दर कोविड-19 के पहले के स्तर पर भी नहीं पहुँच पायी है और लगातार असन्तोषजनक स्तर पर बनी हुई है। यह दिखलाता है कि उत्पादन के साधनों (मशीनों, उपकरणों, आदि) की खरीद की दर कम है। यानी, निजी पूंजी निवेश की दरें लगातार निचले स्तर पर बनी हुई हैं। इसके कारण, पूंजीवादी निवेशकों के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था में भरोसे में कमी आयी है। नतीजा यह है कि 1 अप्रैल 2025 से ही यानी करीब एक वर्ष में 26 अरब डॉलर का एफ़.पी.आई. भारतीय अर्थव्यवस्था से उड़नछू हो गया। वहीं 2024-25 में एफ़.डी.आई. का शुद्ध प्रवाह -0.5 अरब डॉलर था। अगस्त 2025 से जनवरी 2026 के दौरान यह प्रवाह लगातार नकारात्मक बना रहा है। ऐसा होने की

वह 2023-24 में भी सकारात्मक था और 2024-25 में भी सकारात्मक रहा, लेकिन यह पहले से कम हो गया। 2023-24 में पूंजी खाता +89.4 अरब डॉलर था, जो 2024-25 में घटकर +16.6 अरब डॉलर रह गया। वजह विदेशी निवेश इसी दौर में 54.2 अरब डॉलर से घटकर 4.52 अरब डॉलर रह गया। दूसरी ओर, विदेशी कर्ज़ 6.5 अरब डॉलर से बढ़कर 29.3 अरब डॉलर पहुँच गया, जिसने कुछ शुद्ध प्रवाह में कमी को कम दिखला दिया। वहीं भारत में आम तौर पर सकल अचल पूंजी निर्माण की दर भी निम्न बनी हुई है, जिसका हमने ऊपर जिक्र किया और साथ ही खरीदार प्रबन्धक सूचकांक (परचेजिंग मैनेजर्स इण्डेक्स डू पी.एम.आई.) जो पूंजीपतियों के बीच की आपसी खरीद, यानी उत्पादन के साधनों की खरीद का सूचकांक है, वह भी ठहरावग्रस्त है, हालांकि वह कई अन्य पूंजीवादी देशों से बेहतर है। इसकी वजह भी यह है कि भारत में मजदूर वर्ग की वास्तविक मजदूरी को बेहद नीचे गिराकर मुनाफे की औसत दर को उस भारी गिरावट से एक हद तक रोका गया है, जिसका सामना अन्य कई पूंजीवादी देशों को करना पड़ा है। दूसरे शब्दों में, भारतीय अर्थव्यवस्था में मुनाफे की औसत दर में गिरावट की गति को कम करने वाला एक कारक मज़दूरों की औसत आय को लगातार गिराना है। लेकिन अब यह प्रक्रिया भी अपनी अन्तिम सीमा तक पहुँच रही है, जैसा कि भारत

यह दिखलाता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में मुनाफे की औसत दर गिर रही है या ठहरावग्रस्त है। पूंजी निवेश को विनियमित करने वाला कारक होता है लाभप्रदता। यानी पूंजीपति द्वारा लगाये गये हरेक रुपये पर उसे कितना मुनाफ़ा हासिल हो रहा है। यह लाभप्रदता जिस जगह सबसे ज्यादा होगी, पूंजीपति उस जगह अपनी पूंजी निवेश करेगा। अगर लाभप्रद निवेश के ऐसे अवसर ही बेहद कम हों, तो पूंजीपति अपनी पूंजी का सट्टेबाज़ निवेश करते हैं। यानी उन्हें उत्पादक उद्यमों में लगाने के बजाय वे उसे शेयर बाजार में, स्टॉक और बॉण्ड्स की खरीद में निवेशित करते हैं, जो काल्पनिक पूंजी का एक बुलबुला खड़ा करता है। यदि किसी देश में वित्तीय पूंजी का बुलबुला निर्मित हो रहा है, तो अधिक सम्भावना यही है कि उत्पादक उद्यमों में निवेश के लाभप्रद अवसर नहीं हैं, जिसकी वजह से पूंजीपति अपनी पूंजी को जुए और सट्टेबाज़ी में लगाते हैं।

व्यापार-घाटा तो बहुत-सी स्थितियों में हो सकता है। लेकिन पूंजी का देश से बाहर प्रवाह हो रहा हो, देशी पूंजीपति भी सापेक्षतः अपनी पूंजी का पहले से बड़ा हिस्सा देश के बाहर निवेशित कर रहे हों, तो यह इस बात का स्पष्ट संकेत है कि देश की पूंजीवादी अर्थव्यवस्था लाभप्रदता के संकट का शिकार है। रुपये की गिरावट में व्यापार-घाटा और पूंजी का बहिर्गमन, दोनों ही अहम भूमिका निभा रहे हैं और इन दोनों कारकों में से विशेष तौर पर पूंजी का बहिर्गमन लाभप्रदता के संकट को

नौ अगस्त: काकोरी कांड और भारत छोड़ो आंदोलन

स्वाधीनता के लिए निर्णायक आंदोलन का उद्घोष

भारत के स्वाधीनता आंदोलन में नौ अगस्त वह ऐतिहासिक तिथि है, जब स्वतंत्रता के लिए निर्णायक संघर्ष का उद्घोष हुआ था। इसलिए इसे अगस्त क्रांति कहा जाता है। नौ अगस्त की तिथि दो महत्वपूर्ण स्मृतियों से जुड़ी है। पहली तिथि नौ अगस्त 1925 है इस दिन क्रांतिकारी आंदोलन को गति देने के लिए



काकोरी रेलवे स्टेशन पर सरकारी खजाना लूटा गया था। और दूसरी तिथि नौ अगस्त 1942 है। इस दिन अहिंसक आंदोलन को निर्णायक स्वरूप देने के लिए अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन आरंभ हुआ था। इस आंदोलन का आह्वान महात्मा गांधी ने किया था, पर एक रात पहले आठ अगस्त को ही गांधी जी सहित सभी कांग्रेस नेता बंदी बना लिए गए थे। लेकिन यह आंदोलन मानो जन-आंदोलन था। देश के अधिकांश स्थानों पर सामान्य जन हाथ में तिरंगा लेकर निकल पड़े थे। जनसामान्य की भागीदारी के कारण ही इस आंदोलन को अगस्त क्रांति का नाम मिला।

क्रांतिकारी आंदोलन में चंद्रशेखर आजाद, सरदार भगतसिंह सहित अनगिनत क्रांतिकारियों को फांसी और जेल में डाल देने से भले सशस्त्र क्रांति का धारा में कुछ शिथिलता आई पर काकोरी कांड से पूरी अंग्रेज सरकार हिल गई थी। इसकी गूंज लंदन तक सुनाई दी। तब अंग्रेज सरकार ने दो काम किए। एक तो कुछ नागरिक अधिकार देना आरंभ किया गया और दूसरे अंग्रेज विरोधी क्रांतिकारियों का दमन शुरू हुआ। यह क्रांतिकारी गतिविधियों का दबाव ही था कि अंग्रेजों ने कुछ तटस्थ लोगों को विश्वास में लिया और नागरिक अधिकार देने का क्रम बनाया। इसके लिए लंदन से कुछ अध्ययन दल आए और आगे चलकर स्थानीय असेंबलियों के चुनाव हुए। काकोरी कांड के नायक चंद्रशेखर आजाद थे। क्रांतिकारियों को धन की आवश्यकता थी। वे अंग्रेजों को भारत से बाहर करने के लिए निर्णायक लड़ाई छेड़ना चाहते थे। इसके लिए धन जुटाने के अनेक प्रयत्न हुए। तभी पता चला कि ट्रेन से सरकारी खजाना जाने वाला है। कहने के लिए यह खजाना सरकारी था, लेकिन अंग्रेज यह पैसा लंदन से लेकर नहीं आए थे। यह भारतीयों का ही पैसा था। जो अंग्रेजों ने बलपूर्वक वसूला था। क्रांतिकारियों ने भारत की स्वतंत्रता केलिये सशस्त्र आंदोलन में इस पैसे को लगाने का संकल्प किया और पता लगाया कि यह पैसा कब और किस ट्रेन से ले जाया जाएगा। जिस ट्रेन से यह खजाना जाने वाला था, वह आठ डाउन पैसेंजर थी। इस खजाने को लूटने की योजना बनी। इसमें सत्रह क्रांतिकारियों की टोली ने हिस्सा लिया। चन्द्र शेखर आजाद के नेतृत्व में बनी इस योजना में रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खान, योगेशचन्द्र चटर्जी, प्रेमचन्द खन्ना, मुकुन्दलाल, विष्णु शरण, सुरेश चन्द्र भट्टाचार्य, रामकृष्ण खत्री, मन्मन्थनाथ गुप्त, राजकुमार सिंह ठाकुर, रोशन सिंह, राजेन्द्र लाहिड़ी, गोविन्द शरण, रामदुलारे त्रिवेदी, रामनाथ पांडे, शचीन्द्रनाथ सान्याल, भूपेश सान्याल और प्रणवेशकुमार शामिल थे। इसे अंजाम देने के लिए चार जर्मनी-निर्मित माउजर रिवाल्वर जुटाए गए। माउजर की खास बात यह होती है कि यदि इसके बट में लकड़ी का हँडल लगा दिया जाए तो इसे बंदूक की तरह उपयोग में लिया जा सकता है।

ट्रेन जैसे ही काकोरी से सहारनपुर के लिये रवाना

हुई तो इसे चेन खींचकर रोका गया और ट्रेन पर धावा बोल दिया और खजाना लूट लिया। बाद में अंग्रेजों ने 40 क्रांतिकारियों को बंदी बनाया गया। इनमें चार को फांसी, बारह को उम्रकैद, कालापानी और बाकी को चार-चार साल का कारावास का दंड मिला।

भारत छोड़ो आंदोलन

नौ अगस्त 1945 को भारत छोड़ो आंदोलन आरंभ हुआ। इस आंदोलन के पीछे अंग्रेजों द्वारा अपने उस आश्वासन से पीछे हट जाना था, जिसमें अंग्रेजों ने द्वितीय विश्व युद्ध आरंभ होने पर कांग्रेस से सहयोग मांगा और आश्वासन दिया कि युद्ध समाप्त पर वे भारत को स्वतंत्र कर देंगे। इसकी प्रक्रिया भी अभी से ही शुरू कर देंगे और युद्ध समाप्त होते ही भारत स्वतंत्र हो जाएगा। द्वितीय विश्व युद्ध 1939 में आरंभ हुआ था। इसे आरंभ होने में तीन वर्ष बीत गए थे, पर भारत की स्वतंत्रता के लिए कोई प्रक्रिया आरंभ नहीं हो सकी। तब 4 जुलाई 1942 में कांग्रेस ने बैठक की और अंग्रेजों से भारत की स्वतंत्रता केलिये प्रक्रिया शुरू करने का स्मरण दिलाया, पर कुछ नतीजा न निकला। नौ अगस्त 1942 को निर्णायक आंदोलन आरंभ करने का निर्णय हुआ। इसके लिए मुंबई का ग्वालिया टैंक पार्क तय हुआ, अब इस पार्क को अगस्त क्रांति मैदान के नाम से जाना जाता है। यद्यपि चार जुलाई 1942 को हुई इस महत्वपूर्ण बैठक में निर्णायक आंदोलन चलाने के निर्णय पर मतभेद थे, कुछ नेता चाहते थे कि द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। इन नेताओं में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी प्रमुख थे। जबकि पंडित जवाहरलाल लाल नेहरू और मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने आंदोलन से पहले अंग्रेजों से बात करने का सुझाव दिया तो सरदार वल्लभभाई पटेल आदि नेता तीन साल बीत जाने पर भी कोई कदम न उठाने पर नाराज थे और तुरन्त आंदोलन छेड़ने के पक्ष में थे। अंततः अंग्रेजों को एक माह की अवधि दी गई और नौ अगस्त से आंदोलन करने का निर्णय हुआ। बैठक में आंदोलन का विरोध कर रहे चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कांग्रेस से त्यागपत्र दे दिया। अंग्रेजों ने आंदोलन का नोटिस मिलने के बाद भी भारत की स्वतंत्रता के लिए कोई प्रक्रिया शुरू नहीं की। इसके उलट आंदोलन का दमन करने का निर्णय लिया। आंदोलन की तिथि नौ अगस्त से दो दिन पहले, सात अगस्त से ही देश भर में गिरफ्तारियां शुरू कर दीं। गांधी जी सहित अन्य प्रमुख नेता आठ अगस्त को बंदी बना लिए गए। पर देशव्यापी गिरफ्तारियों के बाद भी आंदोलन न रुका। जन-सामान्य तिरंगा हाथ में लेकर निकल पड़ा।

भारत का संभवतः कोई नगर और कस्बा न बचा जहां लोग हाथ में तिरंगा लेकर घर से न निकले। पुलिस ने पचास से अधिक स्थानों पर गोलियां चलाई, जिनमें सैकड़ों लोग मारे गए। यह आंदोलन महीनों चला। अंततः विवश होकर नवम्बर 1942 में अंग्रेजों ने गांधी जी से चर्चा की और समझौता हुआ। गिरफ्तार लोग रिहा हुए। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में यह आंदोलन अंतिम और निर्णायक था। इस आंदोलन का भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और मुस्लिम लीग ने विरोध किया था। नमन उन हुतात्माओं को जिनके बलिदान से हम स्वतंत्र हवा में सांस ले रहे हैं।

मध्यप्रदेश के बहाने: भाजपा-कांग्रेस की अंदरूनी राजनीति पर एक नजर

अपनों से ही लड़ने में व्यस्त दोनों संगठन

राजनीतिक संवाददाता की रिपोर्ट

कांग्रेस और भाजपा दोनों संगठन अपनों से ही लड़ने में व्यस्त हैं। कांग्रेस के लिए तो ऐसे घटनाक्रम आम हो गए हैं। लेकिन बीजेपी के लिए यह बिल्कुल नए और अजूबे हैं। हाल के विधानसभा उपचुनाव के बाद दतिया पार्टी के लिए गले की फांस बन गई है। सवाल हार का नहीं है बल्कि बगावत के संक्रमण का है। इतना खुला चैलेंज अब तक नहीं मिला था। दुखी तो बहुत सारे नेता हैं।

दतिया ने कांग्रेस को राज्यसभा चुनाव के झटके से उबरने का मौका दिया है। अगले विधानसभा चुनाव के पहले पार्टी में उत्साह कायम रखने का अवसर दिया है। कार्यकर्ताओं का मनोबल बनाए रखने के अलावा सपना बुनने की भी उम्मीद दी है। कांग्रेस सुधरना चाहती है। पार्टी ने अपने प्रकोष्ठों को भंग कर दिया है। कहा जा रहा है, नए सिरे से गठन होगा।

भंग और निर्माण भितरघात और गुटबाजी के ही वायरस की बीमारी हैं। कांग्रेस के तो सृजन में भी विसर्जन छिपा है। राज्य में कांग्रेस को जनता ने जितना कमजोर किया है उससे ज्यादा भीतरघात ने

डसा है। कांग्रेस के विधायक बगावत कर भाजपा में पहुंचे, तो वायरस वहां भी पहुंच गया।

बीजेपी में भितरघात और बगावत का बड़ा मामला दतिया में ही उजागर हुआ है। नरोत्तम मिश्रा का टिकट काटना और उसके बाद के सारे घटनाक्रम समीक्षा में हैं। बीजेपी ने दतिया जिला कार्यकारिणी से लेकर जिले के अपने सभी संगठनों को भंग कर दिया है। मुख्यमंत्री और भाजपा अध्यक्ष ने बड़ी बैठक कर हार की समीक्षा भी की है। इसके लिए दो सदस्यों की कमेटी भी बनाई गई है।

नरोत्तम मिश्रा को समीक्षा बैठक नहीं बुलाकर एक तरह से यह संकेत दे ही दिया गया है कि पार्टी का रुख क्या हो सकता है? नरोत्तम मिश्रा जनता में तो पार्टी के लिए पूरी ताकत से काम करते हुए दिखे, लेकिन भितरघात दिखता नहीं है। इसका तो प्रभाव समझ में आता है। वह हारे हुए प्रत्याशी से भी मुलाकात कर रहे हैं। खबरें ऐसी आ रही हैं कि उनके बारे में राज्य संगठन ने केंद्रीय नेतृत्व को अपनी रिपोर्ट भेज दी है।

बीजेपी में एक तरह का तनाव देखा जा सकता है। कमलनाथ सरकार गिरने के बाद कांग्रेस के बागी विधायकों के सहयोग से बनी बीजेपी सरकार के समय से ही यह तनाव बढ़ता जा रहा है। कई शीर्ष नेताओं के अपने क्षेत्र लगभग खत्म हो गए हैं। अगर सागर जिले का ही उदाहरण लिया जाए तो भाजपा के दो ताकतवर नेता गोपाल भार्गव और भूपेंद्र सिंह नाराज दिखाई पड़ते हैं।

राज्य स्तर पर ही नहीं राष्ट्रीय स्तर पर भी भाजपा में दूसरे दलों से आने वाले नेताओं के कारण मूल कैडर के नेताओं में निराशा का वातावरण दिखता है। दूसरी पार्टियों में टूट-फूट और ऐसे नेताओं के भाजपा में शामिल होने का परसेप्शन भी पार्टी के पक्ष में नहीं दिखाई पड़ रहा है। मध्य प्रदेश और केंद्र में बीजेपी

को सत्ता में अच्छा खासा समय हो गया है।

कोई भी राजनीतिक दल लंबे समय तक सत्ता में रहे दूसरे दल की गलतियों पर अपना पक्ष तो मजबूत कर सकता है, लेकिन खुद सत्ता में आने के बाद वैसी ही गलतियां होने पर फिर बचाव का कोई भी रास्ता नहीं बचता।

सियासत में एक बार मौका तो किसी को भी मिल सकता है लेकिन जन विश्वास उसकी योग्यता पर ही लगातार हासिल होता है। राहुल गांधी इसके सबसे बड़े उदाहरण हैं। उनकी विरासत के बावजूद जब से वह राजनीति में आए हैं, कांग्रेस का जनाधार बढ़ने की बजाय घटता ही जा रहा है। अनुशासनहीनता के संकेत से हर राजनीतिक दल गुजर रहा है।

कितनी दुर्भाग्य जनक स्थिति है, कि छोटे-मोटे नेता तो छोड़िए पार्टियों के मुख्यमंत्री रह चुके नेता भी दल बदल कर दूसरे दलों में शामिल हो जाते हैं।



अभी तक यह रोग कांग्रेस में ज्यादा रहा है। कांग्रेस के बारह पूर्व मुख्यमंत्री पार्टी छोड़कर दूसरे दल में चले गए। केवल उत्तर में ही नहीं, दक्षिण के राज्यों में भी ऐसी बगावतें हुई हैं।

कई नेता भाजपा से भी बाहर गए हैं, लेकिन दोनों दलों के बीच तुलना होगी तो निश्चित रूप से भाजपा में अनुशासन थोड़ा बेहतर दिखाई पड़ेगा।

मध्य प्रदेश भाजपा का मजबूत संगठन वाला प्रदेश है। बीजेपी जब सत्ता की राजनीति में कहीं भी नहीं थी तब भी यहां मजबूत स्थिति में थी। कैडर बेस्ड पार्टी का नारा भी दरकता दिखाई पड़ता है। दतिया में भितरघात का संक्रमण पार्टी के लिए खतरे की घंटी है। अगर इसको समझदारीपूर्वक रोका नहीं गया तो फिर धधकने में देर नहीं लगती।

भाजपा के लिए दतिया का अनुभव चुनौतीपूर्ण है। केवल अनुशासन के डंडे से ऐसी चुनौतियों का मुकाबला शायद संभव नहीं होगा। संगठन को भी अपनी निर्णायक गलतियों पर आत्ममंथन करना होगा। भविष्य में जमीनी हकीकत, क्षमता और योग्यता को निर्णय का आधार बनाना पड़ेगा। नए नेतृत्व को आगे लाने की रणनीति को केवल सिद्धांत के तहत नहीं, एक फार्मूले में क्रियान्वित करना होगा। हमेशा पद और सत्ता में रहने की प्रवृत्ति को रोकने पर भी वैचारिक चिंतन और चर्चा करनी पड़ेगी। भाजपा को हर पद के लिए कार्यकाल की समय सीमा तय करने की प्रक्रिया पर भी विचार करना पड़ेगा, साथ ही उसके निर्णय की क्रियान्विति का भी इंतजाम करना होगा।

अब राजनीतिक दलों के लिए बिना किसी आधार के पिक एंड चूज की नीति छोड़नी ही होगी, अन्यथा वे भीतरघात के संक्रमण को रोकने में सफल नहीं होंगे।

आज के राजनीतिक परिदृश्य पर विनोद जोशी की विशेष टिप्पणी

भारतीय राजनीति के इतिहास में युवा हमेशा से बदलाव का संवाहक रहा है, लेकिन वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में जेन-जी यानी नई पीढ़ी के युवा मतदाताओं की ताकत ने देश की पूरी राजनैतिक व्यवस्था का ध्यान अपनी ओर खींच लिया है। सत्ता के सिंहासन पर आसीन होने या उसमें बने रहने की इच्छा रखने वाला हर राजनीतिक दल अब युवा शक्ति के सामने नतमस्तक नजर आ रहा है। 8 अगस्त 2026 का दिन भारतीय राजनीति में इस बात का स्पष्ट साक्ष्य बना।

NEET परीक्षा धांधली और छात्र असंतोष के बीच केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेन्द्र प्रधान के इस्तीफे के बाद यह साफ हो गया है कि जेन-जी ने अपने राजनीतिक व सामाजिक प्रभाव का लोहा मनवा लिया है।

युवा जनमत और आंदोलन की नई लहर:

जब-जब देश में बड़े राजनीतिक परिवर्तन हुए हैं, उनमें युवा वर्ग का निर्णायक योगदान रहा है। 2014 के बाद से निर्मित मोदी युग की सफलता में भी युवा मतदाताओं की अहम भूमिका रही है, लेकिन आज का युवा केवल मूक दर्शक नहीं है।

हाल ही में काँकरोच जनता पार्टी के बैनर तले जंतर-मंतर पर हुए व्यापक प्रदर्शनों ने देशव्यापी अलख जगाई है। दिल्ली, झारखंड और बिहार के शैक्षणिक व प्रशासनिक गलियारों से आ रही छात्र आक्रोश की तस्वीरें सत्ता पक्ष और विपक्ष—दोनों के रणनीतिकारों की धड़कनें बढ़ा रही हैं। यह स्पष्ट हो चुका है कि कोई भी दल युवाओं के समर्थन और विश्वास के बिना सत्ता का सुख नहीं भोग सकता। यही कारण है कि आज सत्ता और विपक्ष दोनों जेन-जी शरणम् गच्छामी की मुद्रा में खड़े दिख रहे हैं।

प्रधानमंत्री का रुख:

राष्ट्रनिर्माण और विकसित भारत का आधार का सपना प्रधानमंत्री मोदी के भाषणों का आधार बनता दिखाई दे रहा है। सीजेपी के राष्ट्रव्यापी छात्र प्रदर्शनों के बाद आठ अगस्त 2026 को प्रधानमंत्री नरेंद्र

'जेन-जी शरणम् गच्छामी' जेन-जी की शरण में सत्ता और विपक्ष



मोदी ने आईआईटी, दिल्ली के 57वें दीक्षांत समारोह में छात्रों से सीधा संवाद किया। हकीकत में जेन-जी शरणम् गच्छामी के साथ उनका पहला बड़ा सार्वजनिक संवाद था। युवाओं की बातें सहानुभूति से सुनना और संवाद कायम करने का उनका यह पहला प्रयास था। अपने चिर-परिचित मजाकिया अंदाज में बाबा बागेश्वर का उल्लेख करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि भले ही वे कोई चमत्कारी बाबा न हों, लेकिन वे अच्छी तरह समझते हैं कि युवाओं के मन में अपने भविष्य को लेकर क्या हलचल चल रही है।

उनके संवाद में भविष्य के रोडमैप की भी झलक दिखाई दी। प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कहा, हमें आप पर अटूट भरोसा है और देश को आपकी प्रतिभा की जरूरत है।

आगे अपनी बात कहते हुए उन्होंने रेखांकित किया कि आगामी 30 से 35 वर्ष भारत के 'विकसित भारत' बनने के सपने को तय करेंगे। इसलिए युवाओं के हर व्यक्तिगत और व्यावसायिक फैसले का

आधार यह होना चाहिए कि उससे देश को क्या लाभ हो रहा है। नरेंद्र मोदी का अंतर्निहित संदेश यह था कि युवा विपक्ष की नकारात्मक राजनीति के बहकावे में आने के बजाय राष्ट्रहित में तार्किक निर्णय लें। इस बात से युवाओं में निराशा भी दिखी कि तत्काल मरहम या राहत के लिए उनके प्रधानमंत्री खाली हाथ पहुंचे थे और 30-35 साल जैसे नुस्खे वे देते ही रहे हैं।

विपक्ष अर्थात् राहुल गांधी का प्रहार

यह संयोग था या प्रयोग ठीक उसी दिन (8 अगस्त 2026) उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में आयोजित 'छात्रों की गूंज' कार्यक्रम में लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने सीधे प्रतियोगी परीक्षाओं, बेरोजगारी और अर्थव्यवस्था के मुद्दों पर केंद्र सरकार पर तीखा हमला बोला। रोजगार संकट और संस्थागत एकाधिकार का मुद्दा उनके एजेंडे में था। रोजगार के घटते अवसरों पर बोलते हुए राहुल गांधी ने दावा किया कि आज स्थिति यह है कि 1,000 में से महज 12

युवाओं को ही रोजगार मिल पा रहा है। उन्होंने आरोप लगाया कि युवाओं की निजी जानकारी और डेटा बेचा जा रहा है।

रील्स का नशा और आज की वास्तविकता पर भी अपना ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने युवाओं को आगाह करते हुए कहा कि शॉर्ट रील्स और वीडियो 21वीं सदी का नया नशा हैं। केवल रील्स बनाने में समय गंवाने से नौकरियां नहीं मिलेंगी।

आर्थिक विषमता और संघ समर्थित संस्थाओं और व्यक्तियों पर संस्थागत नियंत्रण पर भी युवाओं का ध्यान खींचा। उन्होंने आरोप लगाया कि पिछले 10 वर्षों में चुनिंदा कॉर्पोरेट घरानों की आमदनी 30 गुना बढ़ी है, जबकि आम युवाओं के लिए रोजगार के रास्ते बंद हुए हैं। साथ ही, उन्होंने कहा कि देश की न्यायपालिका, नौकरशाही, मीडिया और विश्वविद्यालयों में एक विशेष विचारधारा के प्रचारकों का वर्चस्व स्थापित किया जा रहा है।

अहिंसक बदलाव की अपील कर अपनी छवि को चमकाने का काम भी

उन्होंने किया। हालिया छात्र आंदोलनों की सराहना करते हुए उन्होंने कहा कि युवाओं ने अंधेरे में रोशनी जलाई है, और बदलाव का यह मार्ग हिंसा नहीं बल्कि प्यार और लोकतांत्रिक तरीके से तय होगा।

संघ का संकेत

राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि जंतर-मंतर पर सीजेपी के प्रदर्शन के बाद युवाओं को तार्किक व भावनात्मक रूप से अपने पाले में लाने की होड़ तेज हो गई है। सत्ता और विपक्ष दोनों की निगाहें अब 2029 के आम चुनाव पर टिकी हैं।

दिलचस्प बात यह है कि केवल राजनीतिक दल ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) ने भी जेन-जी की मानसिकता को भांप लिया है। संघ की ओर से भी यह स्वीकार किया गया है कि आज की जेन-जी पीढ़ी अधिक पारदर्शी, ईमानदार और राष्ट्रभक्त है। यह संकेत पर्याप्त है कि इस नई पीढ़ी की आकांक्षाओं, डिजिटल सोच और रोजगार की जरूरतों को नजरअंदाज करके देश का कोई भी संगठन या दल अपना राजनीतिक भविष्य सुरक्षित नहीं कर सकता।

लब्बेलुआब यह..

इस सबका लब्बेलुआब यह है कि सत्ता हासिल करना या उसे बनाए रखना ही राजनीति का मुख्य लक्ष्य है, और इस लक्ष्य की कुंजी जेन-जी के हाथों में है। 8 अगस्त 2026 की घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि भारत का युवा अब केवल वोटों का आंकड़ा नहीं, बल्कि नीतियों और राजनीतिक फैसलों को बदलने वाली एक सशक्त आवाज है। लेकिन अभी रुकिए, किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचना राजनीतिक रूप से जोखिमभरा है। जेन-जी अभी अपने पंख पसारने की जद्दोजहद में है। सीजेपी के मुखिया अभिजीत दिपके बेहद सावधानी से कदम उठा रहे हैं। पेशेवर राजनीतिज्ञ अभी तक उन्हें और उनकी क्षमताओं को परख नहीं पा रहे हैं। याद रखिए सीजेपी ने अगर ग्रामीण क्षेत्रों की ओर ठोस कदम बढ़ा दिए, तो देश का पूरा राजनीतिक परिदृश्य चुनावी राजनीति के आईने में कुछ अलग और नया ही होगा। पेशेवर राजनेताओं की फौज उनके कदमों को परखने में अभी तक असफल रही है, इसलिए आगे की राजनीति दिलचस्प होना तय है।

परीक्षा की घड़ी : एनटीए के लिए सुरक्षा व पारदर्शिता जरूरी

ऐसे वक्त में जब नीट परीक्षा प्रश्नपत्र लीक होने से उपजे छात्र आक्रोश से देश हाल ही में दो-चार हुआ है, देश के परीक्षा सिस्टम पर प्रतिभागियों का भरोसा कायम करना अपरिहार्य शर्त है। हाल के वर्षों में केंद्रीय स्तर और राज्यों में विभिन्न परीक्षाओं के प्रश्नपत्र लीक होने, परीक्षाएं स्थगित होने और परीक्षा परिणामों को लेकर किंतु-परंतु होने की खबरें अक्सर सामने आती रहती हैं। झारखंड लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में अनियमितताओं को लेकर छात्रों का आंदोलन बदस्तूर जारी है। ऐसे में विश्वसनीयता के सवाल से जूझ रही नेशनल टेस्टिंग एजेंसी यानी एनटीए का इटेलिजेंस, कानून लागू करने वाली एजेंसियों तथा डिफेंस फोर्स के अनुभवी लोगों को अपने परीक्षा सुरक्षा कमांड सेंटर में शामिल करने का निर्णय एक स्वागत योग्य कदम है। ये प्रयास दूसरी ओर हमें यह भी बताते हैं कि देश में महत्वपूर्ण प्रवेश परीक्षाएं कितनी संवेदनशील व

असुरक्षित हो गई हैं। नए प्रावधानों के अनुसार इसके टेस्ट सिक्योरिटी और लाइव ऑपरेशन्स अनुभाग के प्रस्तावित जनरल मैनेजर परीक्षा प्रक्रिया के लगभग हर संवेदनशील हिस्से की देखरेख करेंगे, जिसके अंतर्गत प्रश्नपत्र तैयार करने, एन्क्रिप्शन से लेकर ट्रांसपोर्टेशन, स्टोरेज, वितरण और रियल-टाइम मॉनिटरिंग भी शामिल रहेगा। विश्वास किया जाना चाहिए कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता, बायोमेट्रिक ऑथेंटिकेशन, सीसीटीवी निगरानी और परीक्षा के उपरांत डेटा एनालिसिस से परीक्षा व्यवस्था के पारदर्शी व विश्वसनीय होने की उम्मीद की जा सकती है। निस्संदेह, नीट प्रवेश परीक्षा विवाद के उपरांत प्रतिभागियों में भरोसा कायम करने की दिशा में यह एक गंभीर कोशिश होती नजर आती है। लेकिन एक बात तो तय है कि सिर्फ तकनीक के जरिए सिस्टम की खामियां दूर नहीं की जा सकती। हालिया नीट-यूजी पेपर लीक प्रकरण में सीबीआई की

जांच में एनटीए के अपने ही गोपनीय विभाग में खामियां पाई गई थीं, मसलन संतोषजनक ढंग से तलाशी न लेना, सीसीटीवी की अपर्याप्त निगरानी, जिम्मेदारियों का सही बंटवारा न होना तथा अंतिम प्रश्न सेट तक बहुत अधिक लोगों की पहुंच होना, जिसने परीक्षा प्रश्नपत्र के लीक संकट को जन्म दिया। दरअसल, सीबीआई जांच में यह तथ्य भी सामने आया है कि परीक्षा प्रश्नपत्र तैयार करने वाले विशेषज्ञ एक-दूसरे के संपर्क में थे, जिससे परीक्षा की गोपनीयता की सुरक्षा का एक बुनियादी नियम भंग हो गया। वास्तव में, नियमानुसार किसी भी एक व्यक्ति की पहुंच पेपर के सभी फाइनल सेट तक नहीं होनी चाहिए। सबसे बड़ी चिंता की बात यह है कि इस कथित गड़बड़ी के लिए किसी हाई-लेवल हैकिंग की जरूरत नहीं पड़ने दी गई। दरअसल, भ्रष्ट लोगों ने परीक्षा प्रक्रिया की मामूली खामियों का फायदा चालाकी से उठाया। निस्संदेह, यह

बात किसी भी साइबर खतरे के मुकाबले नीति बनाने वालों के लिए चिंता की बात होनी चाहिए। इसमें दो राय नहीं कि दो सप्ताह पूर्व ही धर्मेन्द्र प्रधान की जगह शिक्षा मंत्री बने प्रह्लाद जोशी के कंधों पर एक मजबूत, पारदर्शी और भरोसेमंद परीक्षा सिस्टम बनाने की बड़ी जिम्मेदारी है। उन्हें विषय की संवेदनशीलता को समझते हुए तुरंत विश्वास बहाली के लिए काम आरंभ करना होगा, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि न केवल छात्र, बल्कि उनके अभिभावक व सारा देश फिर से निराश न हो सके। इसी तरह, एनटीए का प्रस्तावित कमांड सेंटर सिर्फ अफसरशाही का एक और विस्तार बनकर नहीं रह जाना चाहिए। वास्तविक अर्थों में इस प्रस्तावित कमांड सेंटर को स्वतंत्र रूप से काम करने का अवसर मिले, स्पष्ट रूप से जवाबदेही तय हो और सुरक्षा में कोई गड़बड़ी पाए जाने पर परीक्षा प्रक्रिया को रोकने का अधिकार मिलना ही चाहिए।

**क्रान्तिकारी
खुदीराम बोस
शहादत दिवस
(11 अगस्त)
के अवसर पर**

एक बार विदाई दे मां घूरे आसी, हंसबि हंसबि चढ़बो फांसी देखबे भारतवासी..

ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के खिलाफ हमारे देश के संघर्ष का इतिहास ऐसे क्रान्तिकारियों की कुर्बानियों से भरा पड़ा है जिन्होंने आजादी के लिए बहुत छोटी उम्र में अपने जीवन को कुर्बान कर दिया। इन क्रान्तिकारियों में खुदीराम बोस का नाम बहुत ऊपर आता है। ब्रिटिश जल्लादों ने जब खुदीराम बोस को फांसी दी थी तो उनकी उम्र मात्र 18 वर्ष 8 महीना 8 दिन थी। लेकिन खुदीराम बोस की शहादत ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के खिलाफ देश के युवाओं की तरफ से समझौताविहीन संघर्ष का संकल्प बन गया। खुदीराम बोस शहीद हो गए लेकिन ब्रिटिश गुलामी के खिलाफ देश की जनता के संघर्ष की ऊष्मा बन गए, जनता की स्मृतियों व संकल्पों में जिंदा रहे और जिंदा हैं।

खुदीराम बोस का जन्म 3 दिसम्बर 1889 में जब अंग्रेजों की बेरहमी और 'फूट-डालो, राज करो' की साजिश जोरों पर थी। वक्त ने खुदीराम बोस को कम उम्र में ही बड़ा कर दिया था। खुदीराम बोस 1902 में ही यानि 13-14 वर्ष की छोटी-सी उम्र में अंग्रेजों के खिलाफ सक्रिय हो गये थे। सत्येन्द्रनाथ बसु की प्रेरणा से वो गुप्त क्रान्तिकारी संगठन के सदस्य बने। खुदीराम बोस की बड़ी बहन अनूरूपा देवी ने लिखा है कि '...1904 में खुदीराम एक बार बिना बताये कहीं चला गया। काफी दिनों बाद एक चिट्ठी मिली जिसमें खुदीराम ने लिखा था कि -मेरी प्यारी बहन, अब यह मेरे लिए सम्भव नहीं कि मैं एक साधारण गृहस्थ की जिंदगी जिऊं, और न ही मेरी आगे पढ़ाई जारी रखने की इच्छा है। तो क्यों मैं आप पर बोझ बनकर रहूँ? सो मैंने सन्यास लेने का फैसला कर लिया है। अनूरूपा देवी ने लिखा है कि -तो मेरा प्यारा छोटा भाई सन्यासी बनने निकल पड़ा! लेकिन नहीं वह ईश्वर की खोज में नहीं निकला था वह तो अपने देश के लोगों को अच्छी तरह जानने समझने के लिए निकला था। ...बाद में पता चला कि वो बांकुरा के एक गरीब, अशक्त, भूखों मर रहे बूढ़े परिवार के खेत में काम कर रहा था क्योंकि उनके पास खेत में कोई काम करने वाला नहीं था। अनूरूपा देवी ने लिखा है कि-खुदीराम को मैंने तीन मुट्ठी खुदी (चावल के छोटे टुकड़े) (बच्चों को मरने से बचाने का टोटका) देकर खरीदा था। मैं चाहती थी कि वो मेरा होकर रहे, लेकिन वह देश के लोगों के हाथों खरीदा जा चुका था। मैंने उसे तीन मुट्ठी चावल के टुकड़ों से खरीदा था। लेकिन देश के निर्भीक लड़कों ने उसे मुट्ठी भर खून से खरीद लिया था।'

मिदनापुर में हैजा फैला तो खुदीराम लोगों की मदद में लग गए। बाढ़ का प्रकोप हुआ तो चन्दा इकट्ठा कर कपड़े खरीदने, खाना खिलाने में लग गये। छोटे बच्चों व बूढ़ों को कंधे पर लादकर सुरक्षित जगह लाते रहे। स्वदेशी आन्दोलन शुरू हुआ तो खुदीराम बोस डट गए। चाहे अंग्रेज व्यापारियों द्वारा बनाये गये नमक या चीनी की बिक्री बन्द करवाना हो या विदेशी कपड़ा बेचने वाली दुकानों के आगे पिकेटिंग करनी हो। 1906 में 'वन्देमातरम्' पर्चा बांटने की वजह से जेल गये बाद में कम उम्र होने व कुछ खुलासा न होने के कारण छूट गये। 1907 में गुप्त संगठन के आर्थिक संकट के समाधान के लिए हाटगछिया में दुर्गा पूजा के दौरान डाक खजाना को लूटा। आखिरी काम था 'किंग्सफोर्ड' की बग्गी पर बम फेंकना। बंगाल विभाजन के खिलाफ आन्दोलन चलाने वाले नवयुवकों को कलकत्ता के इस कुख्यात मजिस्ट्रेट ने कठोर दण्ड दिये थे। इस कुख्यात मजिस्ट्रेट को पदोन्नति देकर मुजफ्फरपुर में सत्र न्यायाधीश के रूप में भेजा गया। इस बदनाम अंग्रेज अधिकारी को

सबक सिखाने के लिए 'युगान्तर समिति' ने निश्चय किया। इस काम के लिए खुदीराम बोस और प्रफुल्ल चाकी नियुक्त किये। दुर्भाग्य से उस बग्गी में किंग्सफोर्ड नहीं था। पुलिस के घिरने के बाद प्रफुल्ल चाकी ने खुद को गोली मार ली थी जबकि खुदीराम बोस गिरफ्तार कर लिये गये। अन्ततः अंग्रेजी जल्लादों ने 11 अगस्त

सम्भव नहीं हुआ या उन्हें अनुमति नहीं मिली। लेकिन वह मुस्लिम महिला जिसने कभी खुदीराम को आश्रय दिया था, वो उनसे मिलने मुजफ्फरपुर चली आई थी। इसके बारे में तत्कालीन स्वतन्त्रता संग्रामियों की संस्था 'विप्लवी निकेतन' द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'मृत्युहीन प्राण' में लिखा है-अपने बहनोई के घर से निष्कासित

पुरुषोत्तम दास का शोषण स्थापित करना नहीं है बल्कि गोरी-भूरी दोनों बुराई मिटाना है। उन्होंने साफ कहा कि क्रान्ति से उनका मतलब धर्मनिरपेक्ष व समतामूलक समाज का निर्माण है जिसमें सत्ता मेहनतकश के हाथ होगी।

आज देश में फासीवाद का प्रेत अपनी कब्र से बाहर आकर सत्ता पर काबिज हो चुका है। संघ परिवार व भाजपा के नेतृत्व में हिटलर और मुसोलिनी के समय की विनाशलीला अलग रूपों में जारी है। आरएसएस और भाजपा के नेताओं के भाषणों में 'राष्ट्र सर्वोपरि है', 'भारतमाता की जय' के नारे खूब सुनाई देते हैं। लेकिन इनका 'राष्ट्र' आम मेहनतकश जनता का नहीं है बल्कि अम्बानी-अडानी, टाटा-विड़ला जैसे धनपशुओं का है। इनके 'राष्ट्र' में मेहनतकशों का खून मुट्ठी भर पूँजी की जोंकें पीती रहती हैं। इन्हीं जोंकों के लिए मोदी सरकार चार लेबर कोड लाई है। इन्हीं जोंकों के लिए शिक्षा और चिकित्सा को बाजार के हवाले कर दिया गया है। इन्हीं जोंकों के लिए नोएडा आदि औद्योगिक क्षेत्रों पिछले दिनों मजदूरों के जायज माँगों पर उठ खड़े स्वतः स्फूर्त आन्दोलन का बर्बर दमन किया गया। अभी भी छात्र-सामाजिक/राजनीतिक कार्यकर्ता फर्जी मुकदमों में जेलों में हैं। इन्हीं जोंकों के फायदे के लिए नई शिक्षा नीति-2020 लाई गयी। मजदूरों के बाद कर्मचारियों के हकों पर डकैती डाली जा रही है। तमाम सरकारी विभागों को पूँजीपतियों के हवाले किया जा रहा है। छात्र-युवा रिकॉर्डतोड़ बेरोज़गारी के भयंकर संकट से त्रस्त होकर अवसाद, आत्महत्या के शिकार हो रहे हैं। थोड़े-बहुत पदों पर अगर भरती आती भी है तो धाँधली/पेपर लीक की भेंट चढ़ जाती है। भाजपा के सत्ता में आने के बाद परीक्षाओं में रिकॉर्डतोड़ धाँधली हो रही है। इसके खिलाफ जन्त-मन्तर पर छात्रों का ऐतिहासिक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। भाजपा सरकार के बर्बर दमन के बावजूद छात्रों-युवाओं ने इस सरकार को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया। इसी की निरन्तरता में रॉची में भी छात्रों का आन्दोलन जारी है। वहाँ भी दमन के बावजूद छात्र डटे हैं। कारपोरेट घरानों के अरबों-खरबों चन्दे से, धार्मिक उन्माद व जातीय समीकरण बिठाकर, चुनावों में धाँधली कर चुनाव जीतने वाली भाजपा पारदर्शिता की बात रोज़ करती है। स्वास्थ्य, शिक्षा जैसे ज़रूरी मदों में भी भयंकर कटौती की जा रही है। जनता रोजी-रोटी के लिए जूझ रही है और नेताओं की विलासिता, चुनावी विज्ञापन और मनोरंजन व विदेश यात्रा में अरबों उड़या जा रहा है। देश के युवाओं को आज देश को इस दुश्चक्र से निकालना होगा। उन्हें देश के क्रान्तिकारियों के विचारों को जानना होगा। देश कोई कागज पर बना नक्शा नहीं होता। देश बनता है लोगों से। देश को सही मायने में चलाते हैं देश के खेतों-कारखानों में खटने वाले मेहनतकश। क्रान्तिकारियों के लिए देशहित का मतलब इनके हित से था। लेकिन आज यही आबादी रोटी-रोटी को मोहताज है। इन्हीं मेहनतकशों के शोषण से अडानी-अम्बानी जैसे मुट्ठी भर पूँजीपतियों को फायदा पहुँचाने के लिए संघ तथा भाजपा लगातार धार्मिक झगड़ों में लोगों का ध्यान उलझा रही है। देश के युवाओं को इस साजिश को बेनकाब करना है। सच पूछिये तो हम खुदीराम जैसे महान क्रान्तिकारियों को इसलिए याद कर रहे हैं ताकि क्रान्ति के सपने पर पड़ी धूल-राख को साफ़ किया जा सके। क्रान्ति की स्पिरिट ताज़ा की जा सके। खुदीराम बोस जैसे क्रान्तिकारियों के जून्हे को अपनाने का नया दौर आ गया है।



1908 को मुजफ्फरपुर जेल में इस नौजवान क्रान्तिकारी को 18 वर्ष 8 महीना 8 दिन की छोटी-सी उम्र में फांसी पर लटका दिया।

खुदीराम बोस के फांसी के बाद बंगाल के जुलाहे एक खास किस्म की धोती बुनने लगे जिनके किनारे पर खुदीराम लिखा होता था। बंगाल की धरती के इस महान सन्तान के प्रभाव को एक बाउल गायक के अमर गीत से समझा जा सकता है। जिसे सुन ऐसा लगता है मानो खुदीराम ने फांसी चढ़ते हुए खुद ही गाया हो- एक बार विदाई दे मां घूरे आसी, हंसबि हंसबि चढ़बो

फांसी देखबे भारतवासी! यह गीत 1910 में एक धोती में छपा हुआ पाया गया।

खुदीराम बोस की पीढ़ी कांग्रेस के समझौतों से, धीरे धीरे इन्तज़ार करने से इतर कुर्बानी व त्याग के रास्ते अंग्रेजी हुकूमत को देश से भगाना चाहती थी। बंगाल की पहली पीढ़ी के क्रान्तिकारी अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष में धार्मिक व भावनात्मक नारों का सहारा लेते थे। लेकिन वो धार्मिक कट्टरपन्थी और साम्प्रदायिक नहीं थे। वन्देमातरम्, भारतमाता की जय, गीता के नाम पर शपथ लेने के बावजूद उनका नज़रिया संकीर्ण नहीं था। खुदीराम बोस से जेल में उनकी बहन का मिलना केवल गोरे साहबों को भगाना नहीं है, इरविन की जगह

खुदीराम को एक वकील सैयद अब्दुल वहीद की बहन के यहां शरण मिली। उन दिनों खुदीराम की प्रत्येक गतिविधि पर खुफिया पुलिस की कड़ी नज़र थी। ऐसे वक्त में एक मुस्लिम महिला द्वारा शरण दिया जाना आश्चर्य की बात थी। जब खुदीराम को फांसी की सज़ा मिली तो वह मुस्लिम महिला खुदीराम से मिलने कलकत्ते से दौड़ी चली आई।

खुदीराम बोस जैसे क्रान्तिकारियों के आगे आने वाले भगतसिंह जैसे क्रान्तिकारियों ने भावना के साथ अपने नारे भी सोच समझकर गढ़े। गौरतलब है कि

भगतसिंह के समय तक वन्देमातरम्, भारतमाता की जय, गीता के श्लोक की जगह इंकलाब जिंदाबाद, कौमी एकता जिंदाबाद, पूँजीवाद-साम्राज्यवाद मुर्दाबाद के नारे क्रान्तिकारियों के मुंह से सुनाई पड़ते हैं। धार्मिक कट्टरता, हिन्दू-मुस्लिम झगड़े के खिलाफ बहुत सचेत तौर पर जनता को शिक्षित व संगठित करने पर जोर देते हैं। कांग्रेस व गांधी के वर्ग चरित्र की सही शिनाख्त करते हैं। शहीद होने से पहले साफ-साफ कहते कि उनका मकसद केवल गोरे साहबों को भगाना नहीं है, इरविन की जगह पुरुषोत्तम दास का शोषण स्थापित करना नहीं है बल्कि गोरी-भूरी दोनों बुराई मिटाना है। उन्होंने साफ कहा कि क्रान्ति से उनका मतलब धर्मनिरपेक्ष व समतामूलक समाज का निर्माण है जिसमें सत्ता मेहनतकश के हाथ होगी।

भगतसिंह के समय तक वन्देमातरम्, भारतमाता की जय, गीता के श्लोक की जगह इंकलाब जिंदाबाद, कौमी एकता जिंदाबाद, पूँजीवाद - साम्राज्यवाद मुर्दाबाद के नारे क्रान्तिकारियों के मुंह से सुनाई पड़ते हैं। धार्मिक कट्टरता, हिन्दू-मुस्लिम झगड़े के खिलाफ बहुत सचेत तौर पर जनता को शिक्षित व संगठित करने पर जोर देते हैं। कांग्रेस व गांधी के वर्ग चरित्र की सही शिनाख्त करते हैं। शहीद होने से पहले साफ-साफ कहते कि उनका मकसद केवल गोरे साहबों को भगाना नहीं है, इरविन की जगह